चन्दामामा
जून १९८१

सूचना

हमारे पाठकों को भली प्रकार विदित है कि उन्हें संतोष, फिर वह चाहे साहित्य संबंधी हो अथवा मूल्य संबंधी, सदा प्रदान करते रहना ही हमारा प्रयास रहा है। प्रतिकूल परिस्थिति या कार्य बाहुल्य आदि बातों को हमने कभी भी महत्व नहीं दिया। लेकिन जब अपना भार दूसरों पर डालने की नौबत हम पर आयी तब हमें अत्यंत खेद हुआ।

लेकिन कुछ हालात ऐसे होते हैं जिनपर किसी का कोई बस नहीं चलता। हम पर भी आज ऐसी ही एक नौबत आ पहुँची है। चंदामामा के प्रकाशन के लिये आवश्यक सभी वस्तुओं के मूल्य बढ़ गये हैं। जिस बात से हमें अधिक कष्ट पहुँचा है वह है इधर कुछ वर्षों से बारबार बढ़नेवाली कागज़ की कीमतें! इसके अतिरिक्त नये बजट के अनुसार हमें कस्टम ड्यूटी भी चुकानी पड़ती है। इन्हीं कारणों से मासिक पत्रिका का प्रकाशन वर्तमान मूल्य पर करना हमें कष्टप्रद हो रहा है। इसीलिये जुलाई १९८१ से एक प्रति का मूल्य रु. १-७५ एवं वार्षिक चंदा रु. २१-०० निर्धारित किये गये हैं।

हमारे पाठक एवं शुभचिंतक इस बढ़ी हुई क़ीमत का भार सहन करेंगे, ऐसी हमें आशा है। अपनी ओर से हम वचन देते हैं कि आपके मनोरंजन के लिये हमेशा नया और अच्छे से अच्छा साहित्य सेवा में प्रेषित करते रहेंगे।

—प्रकाशक

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "ज्ञानोदय" है।

परिस्थितियों का प्रभाव मनुष्यों के चरित्र के अच्छे-बुरे गुणों के लिए कैसे कारणभूत बन जाता है, इसका स्पष्ट चित्र हमें "चोर और बिच्छू" नामक कहानी में मिल जाता है।

अमर वाणी

अंकाधिरोपित मृगश्चंद्रमा मृगलांछनः ।
केसरी नखनिर्भिन्न मृगयूथो मृगाधिपः ।।

[क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि चंद्रमा ने सहृदयता पूर्वक हिरण को आश्रय दिया तो मृगलांछन कहकर उनका तिरस्कार किया गया, पर अपने तेज नाखूनों से जानवरों का शिकार खेलनेवाले सिंह को 'मृगराज' की उपाधि दी गयी ?]

वर्ष : ३२ जून १९८१ अंक : १०

एक प्रति : १-५० : : वार्षिक चन्दा : १८-००

दुश्मनी का राज

सुदर्भ देश की राजकुमारी चंपावती अपूर्व सुन्दरी के रूप में प्रसिद्ध थी। उसके सौंदर्य पर मुग्ध होने वाले कई राजाओं में सुनाग देश का राजा जयचन्द्र भी एक था। चंपावती के स्वयंवर की खबर मिलते ही जयचंद्र बड़े ही उत्साह के साथ सुदर्भ देश को चल पड़ा। लेकिन स्वयंवर के समय चंपावती ने पुन्नाग देश के राजा उदयन के कंठ में वरमाला डाल दी, इससे जयचंद्र बड़ा निराश हुआ।

सुनाग और पुन्नाग देश अड़ोस-पड़ोस में थे। बहुत समय से दोनों देशों के बीच दुश्मनी थी। इसका खास कारण जयचन्द्र की ईर्ष्या थी। राजा उदयन एक समर्थ शासक था।

स्वयंवर के समाप्त होते ही जयचंद्र ने स्वयंवर में आये हुए सभी राजाओं को संबोधित करते हुए गरजकर कहा–"चंपावती ने एक अयोग्य व्यक्ति को वर लिया, इस बात का मुझे बड़ा दुख है। यह स्वयंवर एक स्वांग था। इसलिए अन्य राजकुमारों को इसे सहन नहीं करना चाहिए।"

ये बातें सुनने पर उदयन का परिवार आवेश में आ गया। उन सब लोगों ने उसी वक़्त जयचन्द्र को उचित सबक़ सिखाने पर जोर दिया। लेकिन स्वयंवर में आये हुए अनेक राजकुमार भी जयचन्द्र के इस व्यवहार पर खीझ उठे। फिर भी उदयन ने शांत स्वर में कहा–"जयचन्द्र! तुम एक राज्य के शासक हो। यह सारी बकवास किसलिए करते हो? क्या तुम नहीं जानते कि समर्थ व्यक्ति अपने पराक्रम का परिचय कथन में नहीं बल्कि करनी के द्वारा देते हैं?"

ये बातें सुन वहां पर आये हुए सभी लोग हँस पड़े। उदयन इस बात के लिए

प्रसिद्ध था कि द्वन्द्व युद्ध में कोई भी उसकी समता नहीं कर सकता है। जयचन्द्र भी यह बात जानता था, इसलिए उस वक़्त चुप रहा, फिर अपने राज्य को लौटकर युद्ध की तैयारियाँ करने लगा।

यह खबर गुप्तचरों के द्वारा राजा उदयन को मालूम हुई। दर असल उदयन युद्ध का विरोधी था। फिर भी एक ओर लड़ाई की तैयारियाँ करते हुए दूसरी ओर युद्ध को रोकने के उपायों पर विचार करने लगा। उसे लगा कि सबसे पहले शांतिपूर्ण समझौते के लिए जयचन्द्र के पास दूत को भेजना उचित होगा। तुरंत उसने एक दूत के द्वारा यह संदेशा भेजा–"जयचन्द्र! दुश्मनी तुम्हारे और मेरे बीच है। ऐसी हालत में दोनों देशों के बीच युद्ध छेड़कर असंख्य भोली-भाली जनता की मौत का कारणभूत बन जाना मुझे पसंद नहीं है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम युद्ध के प्रयत्न त्याग दो।"

यह संवाद पाकर जयचन्द्र जोर से हँस पड़ा और दूत का अपमान किया, लेकिन जयचंद्र के मंत्री ने समझाया–"महाराज, राजा उदयन कायर नहीं हैं बल्कि पराक्रमी हैं। अलावा इसके आप कृपया इस बात पर भी विचार कीजिएगा कि अगर हमारी प्रजा उदयन से द्वेष करती हो तो ऐसी हालत में पुन्नाग देश पर हम आक्रमण करेंगे।"

इस बीच जयचन्द्र को एक दिन चंपावती के यहाँ से एक गुप्त पत्र मिला। उसमें

यों लिखा हुआ था : "मैंने अब भली भांति समझ लिया है कि स्वयंवर के वक़्त राजा उदयन को वर कर मैंने बड़ी भारी भूल की है, फिर भी कोई बात नहीं है। पुन्नाग देश की रानी के रूप में मैं दुर्ग के सभी रहस्यों से अच्छी तरह से परिचित हूँ। अगर आप मुझे अपनी रानी बनाने के लिए तैयार हैं तो मैं निश्चय ही आप को पुन्नाग देश का राजा बनाऊँगी। मैं आप के वास्ते राज्य की सीमा प्रदेश के जंगल में इंतजार करती रहूँगी।".

मूर्ख राजा जयचन्द्र ने यह पत्र अपने मंत्री तक को नहीं दिखाया, और थोड़े अनुचरों के साथ जंगल में आकर वह उदयन का बन्दी बन गया। राजा उदयन सादर उसे राजमहल में ले गया और अतिथि गृह में उसके वास्ते सारी सुविधाएँ कर दीं।

इसके बाद उदयन ने सुनाग देश के मंत्री के नाम यों चिट्ठी लिखी—"आपके राजा जयचन्द्र इस वक़्त मेरे यहाँ बन्दी बने हुए हैं। आप इस बात को गुप्त रखियेगा। आपके राजा के लिए किसी प्रकार की हानि न होगी। ये कुछ दिन तक हमारे अतिथि रहकर आपके देश को लौट आयेंगे। इस बीच आप लड़ाई की तैयारियाँ बंद करके जनता के कल्याणकारी कार्य प्रारंभ कर दीजिए। जयचन्द्र ने जनता के दिलों में जो जहरीले बीज बोये हैं, उन्हें निकालकर अड़ोस-पड़ोस के देशों के बीच मैत्री संबंध बढ़ाने का प्रयत्न कीजिए! अगर इस वक़्त लड़ाई हुई तो कुछ हजार-करोड़ों का अप व्यय होगा। यह धन जनता का ही है। आपके देश में जन कल्याणकारी कार्यक्रमों को अमल करने के हेतू मैं अपने देश की ओर से दस करोड़ मुद्राएँ भेंट के रूप में दे सकता हूँ। यह उपहार युद्ध को रोकने के उपलक्ष्य में होगा।"

यह चिट्ठी पढ़कर जयचंद्र का मंत्री एकदम विचलित हो उठा। उदयन की

उदारता का उसे बोध हुआ। उसी वक़्त अपने राजा के न होने की बात गुप्त रख कर राज्य का शासन संभालने लगा। अलावा इसके उदयन के द्वारा प्राप्त धन से उदयन के नाम पर मंत्री ने अनेक जन कल्याणकारी कार्यक्रम अपने देश के सभी भागों में एक साथ शुरू किये।

उदयन ने जयचंद्र को छे महीने तक अपने बंदी के रूप में रखा। इस बीच उसे अनेक प्रकार से समझाया। उसे मुक्त करने के पहले उसने जयचंद्र के मंत्री के नाम जो चिट्ठी लिखी थी, उसका परिचय देकर कहा–"जयचन्द्र, तुम मेरे बन्दी हो, यह बात आज तक तुम्हारे और मेरे राज्य में गुप्त रखी गई। तुम छद्म वेष में अपने देश में प्रवेश करो। तुम्हारी प्रजा मेरे बारे में क्या सोचती है, ये बातें तुम खुद अपने कानों से सुन लो। अगर तुम्हारी प्रजा मेरे साथ द्वेष करती है तो हम युद्ध करेंगे! वरना हम दोनों द्वन्द्व युद्ध के लिए तैयार हो जायेंगे।"

इसके बाद जयचन्द्र अपना वेष बदलकर अपने देश में पहुँचा। वहाँ सब कहीं उदयन की ही तारीफ़ के पुल बांधे जा रहे थे। उदयन के नाम पर राज्य भर में असंख्य कुएँ, तालाब, धर्मशालाएं और वैद्यालय स्थापित थे। सुनाग देश की सारी प्रजा अब पुन्नाग देश के प्रति स्नेह पूर्ण व्यवहार रखने लगी थी।
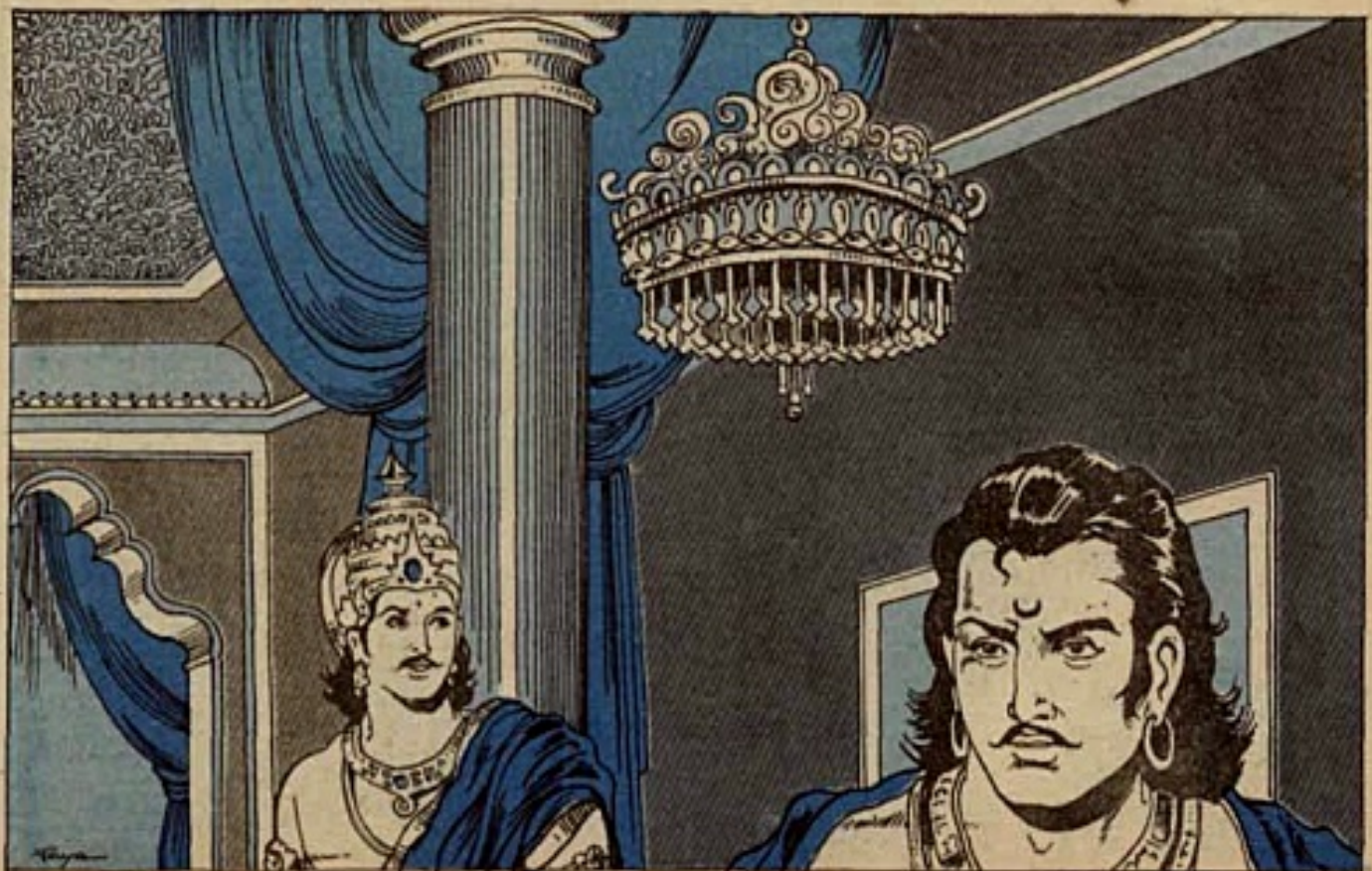
जयचन्द्र ने राजधानी पहुँचकर मंत्री से मुलाक़ात की और उससे पूछा—"यह सब क्या है?"

अपने राजा को लौट आये देख मंत्री बड़ा खुश हुआ और बोला—"राजा उदयन ने अपने वचन का पालन किया है।"

इस पर जयचन्द्र ने नाराज़ होकर कहा—"तुम मेरे शत्रु राजा की तारीफ़ करते हो? क्या तुम राजद्रोही नहीं हो?"

"महाराज, जनता ही राजा के अस्तित्व के कारण होती है! युद्ध तो जनता के अस्तित्व में खतरा पैदा कर देती है। इन छे महीनों के अंदर में जन-कल्याण के कई कार्य संपन्न कर सका। युद्ध के प्रयत्न रोकने से जो धन बच गया, उसमें से थोड़ा धन राजा उदयन ने हमारे पास भेज दिया है। उस धन के द्वारा कई अच्छे काम हुए जिससे हमारी प्रजा सुखी है! आपने राजा उदयन का अपमान किया। उन्होंने आपको बन्दी बनाने के बाद भी हमारे राज्य पर अधिकार करने का प्रयत्न नहीं किया है। इसलिए उनके इस बड़प्पन को मेरे साथ आप भी स्वीकार क्यों नहीं करते?" मंत्री ने समझाया।

अपने देश को सुसंपन्न देखने के बाद मंत्री की बातें सुनने पर राजा जयचन्द्र के मन में ज्ञानोदय हो गया। उसने राजा उदयन के पास उसी वक़्त एक पत्र लिख कर भेजा—"मेरे मित्र, मेरी प्रजा मुझसे बढ़कर आपकी ही ज्यादा प्रशंसा कर रही है। आपने यह साबित किया कि जनता के मन में परिवर्तन लाना राजा का प्रथम कर्तव्य है। मैं इस वक़्त आपके देश के साथ युद्ध करने या आप से द्वन्द्व युद्ध करने का विचार नहीं रखता। मैं आप का अपने देश में हृदयपूर्वक स्वागत करता हूँ— सिर्फ आपके साथ स्नेहपूर्वक आलिंगन करने के लिए।"

राजा उदयन इस पत्र को पढ़कर बहुत ही प्रसन्न हुए। इसके बाद सुनाग और पुन्नाग देशों के बीच बराबर मैत्री बढ़ती ही गई।

[१२]

[गुफा में छिपे समरसेन पर व्याघ्रदत्त के अनुचरों ने हठात् हमला करके उसे बंदी बनाया। व्याघ्रदत्त ने समरसेन से शाक्तेय के बारे में कई सवाल पूछे। समरसेन ने बताया कि वह इस संबंध में कुछ नहीं जानता, तब व्याघ्रदत्त ने समरसेन का वध कराने का निश्चय किया, पर उसी रात को दो नये आदमियों ने उसे मुक्त किया। बाद–]

समरसेन और उसे मुक्त करनेवाले दो सैनिक जब एक गाँव में पहुँचे; तब उन्होंने देखा, वहाँ पर कोई हलचल मची हुई थी। तलवार धारण किये हुए व्याघ्रदत्त के अनुचर गाँव के सभी घरों की खोज कर रहे थे। कई ग्रामवासी भयभीत हो अपने प्राण बचाने के लिए नजदीक के पहाड़ और जंगलों की ओर बेतहाशा भाग रहे थे।

व्याघ्रदत्त के सैनिक ग्रामवासियों को मनमाने ढंग से सताते हुए उनसे गरज कर पूछ रहे थे–"बताओ, शिवदत्त कहाँ है? जल्दी बतला दो!" जो लोग शिवदत्त का पता न बता रहे थे, सैनिक उन्हें सता रहे थे!

गाँव से थोड़ी दूर रहते वक़्त ही समरसेन तथा उसके साथ चलनेवालों ने इस दृश्य को देखा। इस पर वे गाँव में न

यह जवाब सुनकर समरसेन जरा भी संतुष्ट नहीं हुआ, उल्टे उसे अत्यंत आश्चर्य होने लगा। उसकी समझ मे न आया कि शिवदत्त ने उसके जरिये किस प्रकार की मदद पाने के लिये उसे बंधन मुक्त करवाया है। साथ ही उसे यह भी मालूम न हुआ कि आखिर शिवदत्त और व्याघ्रदत्त के बीच दुश्मनी पैदा होने की वजह क्या है?

उसने अपने साथ आये हुए सैनिकों से पूछा–"तब तो इस वक़्त हम लोगों का कर्तव्य क्या है?"

वे दोनों सिपाही थोड़ी देर तक विस्मय के साथ एक दूसरे की ओर चुपचाप ताकते रहें। तब ऐसा लग रहा था कि आगे का कर्तव्य न जानने की वजह से वे परेशान हो रहे हैं।

थोड़ी देर सोच कर एक सैनिक ने कहा– "महाशय, शिवदत्तजी ने आपके साथ दोस्ती करने के ख्याल से आपको यहाँ पर बुला लाने का हमें आदेश दिया है। पर ऐसा लगता है कि उनके निवास वाले इस गाँव का रहस्य व्याघ्रदत्त पर खुल गया है। इसीलिए उसके सैनिक शिवदत्त को बन्दी बनाने के लिए सारे गाँव में उनकी खोज कर रहे हैं! शिवदत्तजी पहले ही इस खतरे को भांपकर किसी दूसरी जगह भाग गये होंगे!"

जाकर समीप के पेड़ों के पीछे छिपकर उस घटना पर निगरानी रखने लगे।

समरसेन के मन में यह शंका पैदा हुई कि आखिर यह शिवदत्त कौन है? इस पर उसने अपनी शंका का निवारण करने के हेतु सैनिकों से पूछा–"क्या तुम लोग जानते हो, वह शिवदत्त कौन है? उसके वास्ते गाँव वालों को सताने वाले ये सैनिक व्याघ्रदत्त के अनुचर तो नहीं हैं?"

"वे लोग हमारे नेता शिवदत्त की खोज कर रहे हैं! उन्हीं के आदेश पर हमने आपको बंधनों से मुक्त किया है! गाँव वालों को सताने वाले ये लोग व्याघ्रदत्त के सैनिक हैं!" एक ने जवाब दिया।

समरसेन तथा सैनिकों ने भांप लिया कि शिवदत्त भागकर जिस जगह छिप गया है, उसका पता न लगने पर वे लोग भी खतरे में फंस जायेंगे। इस हालत में वे लोग अपने आगे के कर्तव्य के बारे में सोच रहे थे, तभी उन्हें पीछे से सीटी की आवाज सुनाई दी। झट तीनों ने आवाज़ की दिशा में देखा। दूर पर एक पेड़ की डाल पर छिपा हुआ व्यक्ति उनकी ओर हाथ का इशारा करते हुए सीटी बजा रहा था।

समरसेन के मन में इस बात का शक हुआ कि पेड़ की डालों में छिपा व्यक्ति उनका दोस्त है या दुश्मन! पर उसने सोचा कि वह इस प्रदेश के लिए तो नया व्यक्ति है, इसलिए उस हालत में खुद किसी निर्णय पर पहुँचने के पहले अपना साथ देनेवाले आदमियों की सलाह का पालन करना उचित होगा।

इस बीच समरसेन के साथ रहनेवाले सैनिकों में से एक ने संकेत के रूप में जोर से सीटी बजाई। इसके जवाब में पेड़ की डालों में छिपे रहने वाले व्यक्ति ने दो बार सीटी बजाई।

इस पर एक सैनिक ने बताया–"वह तो हमारा मित्र है! क्योंकि उसने हमारे गुप्त संकेत को समझ लिया है! यह इशारा शिवदत्त के अनुचरों को छोड़ दूसरे लोग नहीं जानते! अब उठो, हम लोग जल्दी यहाँ से चल देंगे।"

पता न था कि इस वक़्त शिवदत्त कहाँ पर है? उससे कैसे मिलें? यह सवाल उनके सामने था।

सैनिकों में से एक ने कहा—"ये हैं समरसेन! इनको हम व्याघ्रदत्त के यहाँ से छुड़ाकर ले आ रहे हैं! इनको जहाँ तक हो सके, जल्दी शिवदत्त से मिलना है! क्या तुम जानते हो कि वे इस वक़्त कहाँ पर मिल सकते हैं?"

इसके जवाब में नये व्यक्ति ने कहा—"उन्होंने मुझे यह नहीं बताया कि वे कहाँ पर रहेंगे! मगर इस नक़्शेवाला कागज़ वे मेरे हाथ दे गये हैं! उन्होंने बताया कि इसमें उन्होंने अपने टिकने के स्थान पर चिह्न लगाया है। इस तरह आप लोग परिशीलन कीजिए! ये चिह्न तो मेरी समझ में नहीं आ रहे हैं!" यों समझाकर अपनी पोशाकों में से एक नक़्शा निकालकर नये व्यक्ति ने उनके हाथ दे दिया।

समरसेन ने उस नक़्शे को खोल कर देखा। उसमें पहाड़ों के बीच उजड़े हुए कुछ घर, कुएँ और तालाब चित्रित हैं। हर एक चित्र के नीचे उसका नाम स्पष्ट लिखा हुआ है। मगर इस बात के कोई निशान नहीं है कि शिवदत्त कहाँ पर छिपे हुए हैं?

इसके बाद समरसेन और उसके साथ के दो सैनिक उस पेड़ के निकट पहुँचे। इन्हें देखते ही वह पेड़ की डालों में से नीचे उतर आया।

नये व्यक्ति ने थोड़ी देर गाँव की ओर देखकर बताया—"आप ही लोगों के वास्ते शिवदत्त ने मुझे यहाँ पहरे पर बिठाया है! आज़ सवेरे व्याघ्रदत्त के सिपाहियों ने गाँव को घेर लिया है। यह खबर शिवदत्त ने पहले ही भेदियों के द्वारा जान ली और अपने अनुचरों के साथ वे गाँव से भाग गये हैं!"

उसकी बातें सुनने पर सब की जान में जान आ गई। मगर उन्हें इस बात का

नक़्शे को देख समरसेन ने अपना विचार बताया–"शिवदत्त पहाड़ों के बीच के इन उजड़े घरों की तरफ़ भाग गये हैं! पर मेरी-समझ में यह बात नहीं आ रही है कि ख़तरे में फँसे हुए शिवदत्त को ऐसी जगह भाग आने का मतलब ही क्या है? हमें तो किसी भी हालत में सही वहाँ पर जाना ही होगा।"

इसकी स्वीकृति के रूप में सबने सर हिलाये। लेकिन उस नक़्शे को देख वहाँ तक पहुँचने का रास्ता दिखाने की जिम्मेदारी समरसेन पर आ पड़ी। उसने एक बार समीप के गाँव की ओर नज़र दौड़ाई। सारा गाँव धक् धक् करते जल रहा था। व्याघ्रदत्त के सिपाही कोलाहल करते मनोरंजन करनेवालों जैसे उछल-कूद कर रहे थे।

उस दृश्य को देखने पर समर सेन को बड़ा कोध आया। मगर उसे लगा कि अपने थोड़े साथियों को लेकर व्याघ्रदत्त के सैनिकों का सामना करना ख़तरे से ख़ाली नहीं है। उसे तुरंत जाकर शिवदत्त से मिलना ही होगा। उसके द्वारा कोई ख़ास गुप्त बात जान लेनी है।

यों विचार करके समरसेन ने एक बार और नक़्शे को परख कर देखा। तब अपने साथियों के साथ चल पड़ा। नक़्शे में निर्देशित दिशाओं में उन्हें बड़ी सावधानी के साथ चलना था। साथ ही रास्ते में व्याघ्रदत्त के सिपाहियों के हमले से भी बचना जरूरी था।

थोड़ी दूर तक जंगल में चल कर आख़िर वे एक पहाड़ी प्रदेश में पहुँचे। वह प्रदेश छोटे-मोटे पहाड़ों के साथ ऊबड़-खाबड़ था। दूर तक कहीं पगडंडियों और गाँवों का पता न था।

समरसेन ने एक पहाड़ पर चढ़ कर चारों ओर नज़र दौड़ाई। पहाड़ के नीचे छोटी-छोटी घाटियाँ दिखाई दीं। समरसेन के मन में यह आशा जगी कि उस प्रदेश में पहुँचने पर उन्हें आगे का

रास्ता मालूम होगा। समरसेन ने सोचा कि नक़्शे में दिये गये चिह्नों के आधार पर शिवदत्त के पास पहुंचना बड़ा ही मुश्किल है।

इस के बाद सब लोग पहाड़ पर से नीचे उतर आये। वह प्रदेश बड़ी-बड़ी चट्टानों तथा कंटीली झाड़ियों से भरा हुआ था। पर नक़्शे में शिवदत्त के द्वारा अंकित किये गये उजड़े घर या वहाँ तक पहुँचने का रास्ता सूचित करने वाला कोई चिह्न न था।

समर सेन और सैनिक जब थोड़ी दूर और आगे बढ़े तब उन्हें आश्चर्य के साथ डर पैदा करने वाला एक दृश्य दिखाई दिया।

एक ऊँचे पहाड़ पर से बड़ा झरना एक राक्षस के मुँह से बड़ी ध्वनि के साथ नीचे गिर रहा था। पहाड़ी चट्टान में राक्षस की आकृति वाला वह सिर अच्छे ढंग से तराशा गया था। दर्शकों को ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वह झरना एक भयंकर राक्षस के सिर से पैदा होकर बाहर गिर रहा है।

"यह तो बड़ा ही अनोखा लगता है। इसके चारों तरफ़ कहीं मानवों के निवास दिखाई नहीं दे रहे हैं। पर इस बात में कोई शक नहीं है कि पहाड़ी शिला में राक्षस का सर गढ़ने वाला व्यक्ति कोई मानव ही होगा!" समरसेन ने कहा।

सैनिक उस भयंकर दृश्य को देखते मौन रह गये। ध्यान से देखने पर उस झरने के पीछे एक सुरंग दीख रहा था। समरसेन के मन में यह विचार आया कि संभवतः शिवदत्त उस सुरंग में से ही भाग गया होगा। उसके पीछे का प्रदेश अत्यंत सुरक्षित ही नहीं; बल्कि वहाँ पर ठहरने से कोई शंका तक नहीं कर सकता था।

समरसेन ने नक़्शे को एक बार और ध्यान से परखकर देखा। उसमें एक जगह झरने का निशान था। इस पर उसे

उसका अंदाजा सही मालूम हुआ। इसके बाद वह सैनिकों को साथ ले घुटने तक के जल में पैदल चलकर झरने के पीछे के सुरंग में घुस पड़ा।

सुरंग का रास्ता थोड़ी दूर तक घने अंधकार से भरा हुआ था। फिर भी समरसेन डरकर पीछे न लौटा। थोड़ी हिम्मत के साथ आगे बढ़ा, तब उसे कोई पतली रोशनी दिखाई दी। इसके बाद आँखो को चौंधियाने वाला एक समतल प्रदेश नज़र आया। उसके चारों तरफ ऊँचे पहाड़ थे। फिर क्या था, समरसेन और सैनिक सुरंग मार्ग से बाहर आये। वहाँ पर उन्हें मोरों के झुंड दिखाई दिये। उनमें से कुछ मोर नाच रहे थे। कुछ और मोर हवा में उड़ते कूक रहे थे।

समरसेन ने आश्चर्य में आकर कहा– "मैंने इतने सारे मोरों को एक साथ कहीं देखा न था। उसके साथी सैनिकों ने भी ऐसे झरने तथा मोरों के झुंडों को आज तक कहीं देखा न था।

थोड़ी देर तक मोरों के नाच को देख वे लोग अपना मन बहलाव करते रहे, फिर आगे बढ़े। फिर चन्द मिनटों में वे लोग पहाड़ी गुफा के पास पहुँचे। अचानक उन्हें हाथी के चिघाड़ने की आवाज़ सुनाई दी। सब लोग यही सोच रहे थे कि अब किस दिशा में भागा जाय, तभी गुफा के अन्दर से एक हाथी तेजी के साथ बाहर कूद पड़ा।

हाथी को चिघाड़ते-दौड़ते आते देख समरसेन और उसके साथी सैनिक भयकंपित हो तितर-बितर हो भाग गये। थोड़ी दूर भागकर समरसेन एक बड़ी चट्टान के पीछे छिप गया। हाथी का अचानक एक गुफा के भीतर से बाहर कूदने का मतलब था कि उसने कहीं किसी बड़े दुश्मन के खतरे का अंदाजा लगाया होगा!

उस सुरंग के अंदर हाथी को घबड़ा देने वाला प्राणी क्या है? इस पर समरसेन को फिर शक हुआ कि कहीं उसने शिवदत्त के द्वारा नक्शे में अंकित चिह्नों को ठीक से समझ न लिया हो। (और है)

ज्ञानोदय

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने पूछा–"राजन, मैं नहीं जानता कि आप किसके वास्ते यों श्रम उठा रहे हैं? अगर परीक्षा ली जाय तो यह साबित होगा कि कोई भी व्यक्ति किसी के वास्ते किसी प्रकार का त्याग नहीं करता। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को श्रीपुर के राजकुमार कामपाल का वृत्तांत सुनाता हूं! श्रम को भुलाने के लिए सुनिये!"

बेताल यों सुनाने लगा: श्रीपुर पर राजा गुणवर्द्धन का शासन था। उनका पुत्र कामपाल एक बार बीमार पड़ा। राजवैद्यों ने राजकुमार का इलाज किया। मांत्रिकों ने अपने सारे मंत्रों का उस पर प्रयोग किया। मगर दिन-प्रति दिन

बेताल कथाएँ

राजकुमार की तबीयत बिगड़ती ही गई ।

उस हालत में एक भिक्षु राजदरबार में इस तरह पहुँचा, मानो उसे किसी ने वक़्त पर भेज दिया हो! राजा ने आदर के साथ भिक्षु का स्वागत किया और उससे निवेदन किया–"महात्मा, आप समय पर साक्षात् बुद्ध भगवान की तरह मेरे दरबार में आये । कृपया आप मेरे पुत्र को मौत के मुँह में जाने से बचाइये!"

बौद्ध भिक्षु ने कहा–"मुझे मालूम हुआ है कि आपका पुत्र मृत्यु शय्या पर है । इस वजह से सभी दरबारी दुखी हो अपने-अपने कामों में दिलचस्पी नहीं ले रहे हैं । इसलिए शासन के कार्य में ढिलाई आ गई है! इसमें क़ोई संदेह नहीं है कि आपके पुत्र को कोई भी हृदय से ज़िंदा रहना चाहता है तो वह ज़िंदा रह जाएगा ।"

"महात्मा, आप यह क्या कह रहे हैं? इस देश में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो मेरे पुत्र को ज़िंदा न रहने की कामना रखते हो । सब कोई उसकी पूर्ण आयु की कामना रखते हैं!" राजा ने कहा ।

"केवल कामना करने मात्र से कोई प्रयोजन नहीं है! जो लोग हृदय से राजकुमार को ज़िंदा रखना चाहते हैं, वे अपनी आयु देकर राजकुमार के बदले मरने को तैयार हो जाय!" भिक्षु ने कहा ।

भिक्षु के मुँह से ये बातें सुनकर सब लोग मौन रह गये, मगर सब लोग तीव्रता के साथ इस बात पर विचार करने लगे ।

राजा ने कहा–"महात्मा, एक की आयु के लिए दूसरे की आयु समर्पित करना क्या संभव है? उदाहरण के लिए मैं अपनी आयु अपने पुत्र के वास्ते समर्पित करूँ, मैं मर जाऊँ तो यह बालक कब बड़ा होकर राज्य का भार संभाल लेगा? तब तक उसके कुशल-क्षेम देखनेवाला कौन है? मेरी मृत्यु के बाद उसके चारों तरफ़ न मालूम कितने षड़यंत्र शुरू हो जायेंगे? ऐसी हालत में मेरे पुत्र को जीवित रखने

के वास्ते मेरा मर जाना निरर्थक साबित हो जायगा न?"

इसके बाद रानी ने यों कहा-"मेरा प्यारा पुत्र मेरी आयु लेकर जीवित रह जाएगा तो मुझे बड़ी खुशी होगी, पर मेरे मरने के बाद दूसरे ही क्षण में राजा दूसरा विवाह करेंगे। मेरे पुत्र को सौतेली माँ की छाया में पलना पड़ेगा। राजा नई पत्नी का गुलाम बनकर मेरे पुत्र की उपेक्षा करेंगे। उसके कई सौतेले भाई पैदा होंगे, राज्य के वास्ते कितने ही अत्याचार और अन्याय शुरू होंगे। ऐसी हालत में मैं मर कर अपने पुत्र को मेरी आयु दूं तो फ़ायदा ही क्या है? अगर मैं ज़िंदा रहूँ तो और अनेक पुत्रों को जन्म दे सकती हूं! मैं तो कोई अधेड़ उम्र की या बूढ़ी नहीं हूं न?"

मंत्री ने सोचा-"मैं इस राज्य की सुरक्षा के लिए दिन-रात जागरूक रहता हूँ, इसीलिए यह राज्य सुरक्षित और सुखी है। अगर मैं राजकुमार के वास्ते अपने प्राण समर्पित कर दूं तो दूसरे ही क्षण इस देश पर शत्रु अधिकार कर लेंगे। लोग मेरी सामर्थ्य की चर्चा करते हैं, पर राजा की नहीं। इस छोटे बालक के वास्ते अपने प्राण त्यागना मूर्खता होगी। मेरा भविष्य उज्जवल है, इस राजकुमार का भविष्य संदेह से भरा हुआ है।"

सेनापति ने यों सोचा-"मैं राजा के वास्ते हर क्षण मरने के लिए तैयार बैठा हुआ हूं, पर मैं एक वीर की तरह मरना चाहता हूं। सिर्फ़ प्राण दान करने के लिए मैं जीवित नहीं हूँ। जब राजकुमार के निकट के लोग मौन हैं, तो बीच में अपना सर क्यों दूं?"

दरबार के अन्य बड़े अधिकारी सिर्फ़ दुखी होने का अभिनय करते थे; क्योंकि उनमें से ज्यादातर लोगों की नज़र में राजकुमार का ज़िंदा रहना या न रहना खास मतलब नहीं रखता था।

बौद्ध भिक्षु ने कहा-"महाराज, आप देखते हैं न? आप के पुत्र के ज़िंदा रहने

की कामना कोई नहीं करता।" –यों कह कर बौद्ध भिक्षु वहां से चले गये।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा– "राजन, राजकुमार की मौत की चिंता करने वालों में एक भी अपनी आयु देने के लिए तैयार नहीं हुआ। इसकी वजह क्या है? बाक़ी लोगों के दुख को हम भले ही अभिनय मानें, लेकिन उसके माता-पिता भी अपने पुत्र के वास्ते अपनी आयु क्यों समर्पित न कर पाये? क्या कामना और अंत:करण सत्य नहीं होते? सब लोगों की ज़िंदगियां कृत्रिम और स्वार्थ से भरी हैं? इस संदेह का समाधान जान कर भी न देंगे तो आपका सिर फट जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "कामना और अंत:करण असत्य नहीं हैं। इस दुनिया में एक दूसरे के वास्ते दुखी होना, एक के आनंद को दूसरों के द्वारा बांट लेना, बच्चों के प्रति बड़ों का वात्सल्य रखना, बड़ों के प्रति बच्चों की श्रद्धा-भक्ति-ये सारे गुण मानव के जीवन में अमूल्य हैं और ये गुण मानव जीवन को शोभा और सौंदर्य प्रदान करते हैं। मगर मानवों के बीच के प्यार के बंधन वास्तव में जीवन के बंधन भी होते हैं। माता-पिता बच्चों को अपने जीवन के अंग मानकर ही प्यार करते हैं। एक के जीवन को समर्पित करने का मतलब दूसरे को भी जीवन के साथ त्याग करना है। वह प्रेम कैसे हो सकता है? एक के वास्ते दूसरे का प्राण त्यागना उद्रेक पूर्ण कार्य होता है? विवेक पूर्वक सोचने पर उस त्याग का कोई विशेष मूल्य नहीं है! उदाहरण के लिए– राजा और रानी ने अपने पुत्र के वास्ते अपनी आयु समर्पित करने के संदर्भ में अपनी बुद्धि का उपयोग करके विचार किया है। ऐसी हालत में क्या हम मान सकते हैं कि इसमें उनका स्वार्थ या कुतर्क है? कभी नहीं!"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

जो भूल समझ में आ गई!

बलवीर ने गाँव के लोगों के कपड़े धोने का पेशा छोड़ दिया। गधों का व्यापार शुरू किया। एक दिन गाँव के धनी किसान महादेव ने उसे बुलाकर समझाया–"सुनो, साहूकार केशव प्रसाद के मकान के सामने वाला मवेशी खाना तुम्हें बिना किराया लिये दे देता हूँ। तुम वहाँ रह कर अपना पेशा ठाठ से चला लो।"

महादेव और केशव प्रसाद के बीच दुश्मनी थी। यह बात जानकर भी बलवीर ने मुफ़्त में मिलने वाले मवेशीखाने के लोभ में पड़ कर अपने सारे गधों को वहाँ पर पहुँचा दिया। वे गधे दिन के वक्त चुप रह जाते थे, मगर रात में रेंक कर केशव प्रसाद के घर वालों की नींद हराम कर देते थे। केशव प्रसाद ने बलवीर को बुलाकर समझाया कि वह अपने गधों को किसी दूसरी जगह ले जावे, मगर बलवीर ने न माना।

इसके थोड़े दिन बाद आंधी आई, मवेशीखाने के गिर जाने से चार गधे मर गये। बलवीर ने सर पीट लिया और मरे हुए गधों को गाँव के बाहर घसीटवाने के लिए चन्दा मांगने के लिए केशव के पास गया। केशव प्रसाद ने सहानुभूति दिखाते हुए बलवीर के हाथ चालीस रुपये रख दिये। बलवीर ने अजरज में आकर पूछा–"इन मरे हुए गधों को गाँव के बाहर पहुँचाने के लिए चार रुपये काफी हैं, आपने चालीस रुपये क्यों दिये?"

"कोई बात नहीं, रख लो! फिर से नये गधों को खरीदे बिना तुम चुप न रहोगे? और न आंधी आये बिना न रहेगी?"

अमीर लोगों के झगड़ों में दखल देने की अपनी भूल पर पछताते हुए बलवीर ने अपने कान पकड़ लिये, और बचे हुए गधों को हांक ले जाकर उसने दूसरी जगह अपना व्यापार शुरू किया।

झूठा जमीन्दार

सीतापुर के जमीन्दार के मन में इस बात का घमण्ड था कि वह सबसे बड़ा धनवान है, साथ ही सब लोगों के बीच धनी कहलाने की उसके मन में लालाच थी। इस कारण उसके चौपाल में रहते समय कोई आकर कुछ मदद मांगता तो वह यही कह देता–"तुम घर आ जाओ, जो कुछ चाहते हो, ले जाओ।"

इस कारण सभी लोग यही समझ लेते थे कि जमीन्दार साहब बड़े ही उदार हैं। लेकिन असली बात यह थी कि कोई याचक उसकी बात पर यक़ीन करके घर पहुँच जाता तो वह अंगूठा दिखा देता था। उल्टे उन्हें डांट देता–"अबे, मेरे दस लोगों के बीच बैठे देख तुम वक़्त का भी ख्याल किये बिना यों मुझसे मदद मांगते हो? फिर कभी तुमने ऐसा किया या तुमने किसी से यह कहा कि मैंने तुम्हें खाली हाथ लौटा दिया है, तो तुम्हारा इस गाँव में रहना दूबर हो जाय! खबरदार!"

याचक जमीन्दार की बातें सुन चुपचाप घर लौट जाता, कभी किसी से यह बात नहीं कहता कि जमीन्दार साहब ने उसे खाली हाथ लौटा दिया है। पर गाँववाले इस रहस्य को जानते न थे, इस कारण गाँव में होने वाले देवताओं के उत्सव तथा अन्य मांगलिक कार्यों में उन्हें निमंत्रित कर उनका बड़ा आदर करते थे।

इस कारण जमीन्दार को एक ओर यश प्राप्त होता था और दूसरी ओर बिना एक पाई के खर्च के उसके सारे निजी काम पूरे हो जाते थे।

एक दिन उस गाँव का गरीब किसान रामसुभग अपनी गरीबी से तंग आकर जमीन्दार साहब से मदद मांगने पहुँचा। उस वक़्त जमीन्दार चौपाल पर बैठा था।

गिरिधर लाल

उसे कई लोग घेरे हुए थे और उसकी बातें सुन खुशी के मारे सर चालन कर रहे थे।

राम सुभग ने विनयपूर्वक हाथ जोड़ कर जमीन्दार साहब को अपनी गरीबी की विपदा सुनाई।

जमीन्दार ने उसके प्रति बड़ी सहानुभूति दिखाते हुए कहा—"अरे भाई, तुम ऐसे आफ़त के वक़्त भी मुझसे मदद मांगने क्यों नहीं आये? शाम को मेरे घर आकर दुधारू भैंस को हांक ले जाओ!"

जमीन्दार साहब की इस उदारता पर रामसुभग खुशी के मारे फूल उठा।

उस दिन शाम को जब रामसुभग जमीन्दार के घर पहुँचा, वह ड्योढ़ी पर मिले, आँखें लाल करके बोले—"अबे, तुम्हें अपनी आफ़त की कहानी सुनाने के लिए चौपाल के पास आने की क्या ज़रूरत आ पड़ी? क्या तुम घर पहुँचकर मदद मांगते तो कुछ न कुछ नहीं देता? क्या दूधारू भैंसों को दान देने के लिए मैं यहाँ पर दान कर्ण बन कर बैठा हुआ हूँ? जाओ, फिर कभी मेरे दर्वाजे पर क़दम न रखो। यह बात कभी तुमने अपने मुँह से निकाली तो तुम्हारा चमड़ा उधेड़ दूंगा! समझे!"

रामसुभग यह सोचकर चकित हो पल भर खड़े खड़े देखता रह गया कि ये बातें उसी जमीन्दार के मुँह से निकल रही हैं जिसने दान देने का वचन दिया? फिर वह अपना सिर झुकाकर वहाँ से चला गया। मगर वह गरीब किसान रामसुभग

बड़ा स्वाभिमानी था। उसे इस बात का बड़ा दुख हुआ कि जमीन्दार ने तो अपने वचन का पालन नहीं किया, उल्टे उसका अपमान कर डाला है।

रामसुभग की पत्नी ने ये सारी बातें सुन कर कहा–"ओह, जमीन्दार साहब का असली रूप यह है। उसने दान देने का लोभ दिखाया, इसलिए तुम उसके घर गये। अब उसने अपना वचन भंग किया है। इसका पाप उसे ही लगेगा। इसलिए तुम चिंता मत करो।"

रामसुभग देर तक सोचता रहा, आखिर उसे कोई उपाय सूझा, उसने कहा–"मैंने यह कभी नहीं सोचा था कि जमीन्दार से मिलनेवाली दुधारू भैंस से हमारी सारी गरीबी हमेशा के लिए दूर हो जाएगी। मगर दान देने से दूर, उल्टे उसने मेरा अपमान किया, इस वास्ते उसे कोई अच्छा सबक़ सिखाना होगा।"

दूसरे दिन शाम को रामसुभग जमीन्दार की भैंसों के चरने वाले मैदान में पहुँचा, दो अच्छी दुधारू भैंसों को हांककर चौपाल के पास पहुँचा। उस समय जमीन्दार साहब चौपाल में कई लोगों के बीच विराजमान थे। इस पर जमीन्दार का नौकर यह बताने के लिए चौपाल की ओर दौड़ा-दौड़ा आ पहुँचा कि रामसुभग जमीन्दार की भैंसों को चुराकर ले जा रहा है।

उस वक़्त चौपाल के पास जमीन्दार साहब को घेरे गाँव के कई बुजुर्ग खड़े हुए थे। जमीन्दार उन लोगों से बातचीत कर रहा था। वहाँ पर आगे-आगे रामसुभग और उसके पीछे जमीन्दार का नौकर पहुँचे।

रामसुभग ने जमीन्दार को प्रणाम करके कहा–"सरकार, आप ने बड़ी मेहर्बानी के साथ मुझे जो भैंसें दान में दीं, उनकी चोरी करने का इलजाम आप का नौकर मुझ पर लगा रहा है। मैं यही बात आप से निवेदन करने आया हूँ। आप ने कल शाम को मुझे दो दुधारू भैंसें दान कर दीं थीं न?"

जमीन्दार को लगा कि मानो उसके गले में बात अटक गई है। वह चुप रह गया।

अनोखा उपहार

सिसिली राज्य के एक छोटे गाँव में दो किसान रहा करते थे। दोनों के घर एक साथ बच्चे पैदा हुए। दोनों ने मिलकर एक साथ बच्चों का नामकरण उत्सव मनाना चाहा और बच्चों के नाम फ्रांको और जिराल्डो रखा। उस देश की जनता में यह विश्वास था कि बच्चों के नामकरण के समय दो देवियाँ आकर उन्हें आशीर्वाद देती हैं। इसी ख्याल से दोनों किसानों ने खाने की मेज के पास दो खाली कुर्सियाँ लागावाईं।

दावत समाप्त होने को थी, तब दो देवियाँ प्रत्यक्ष हुईं। उन में से एक बूढ़ी थी। वह प्रसन्न वदन के साथ फ्रांको की माँ के पास बैठ गई। दूसरी जिराल्डो की माँ की बगल में बैठ गई।

वृद्धा देवी ने फ्रांको के सर पर हाथ रख कर कहा—"यह लड़का सदा प्रसन्न एवं सुख-संतोष पूर्वक रहे, यों आशीर्वाद देते हुए मैं यह 'विचित्र वेणु' इसे भेंट करती हूँ। जब भी वह इस वेणु को बाजाएगा, तब वह अपनी सारी चिंताओं को भूल कर सदा-सर्वदा प्रसन्न रहेगा। यही इसका महत्व है।"

दूसरी देवी जिराल्डो के सर पर हाथ रख कर बोली—"मैं जिराल्डो को एक अनोखा उपहार भेंट करती हूँ। इस के द्वारा यह बालक हमेशा संपन्न रहेगा। इसे जब भी धन की जरूरत पड़ेगी, इस चमड़े की थैली को खोलकर 'तांबा, चांदी, सोना' कहे तो बस थैली में तीन सोने के सिक्के अपने आप निकल आयेंगे, मगर याद रखने की बात यह है कि इसका उपयोग एक दिन में केवल एक ही बार करना चाहिए।"

भेंट देकर दोनों देवियाँ गायब हो गईं। जिराल्डो के माँ-बाप अपने पुत्र को प्राप्त

इटली की लोक कथा

इस अपहार पर बहुत खुश हुए। लेकिन फ्रांकों के माता-पिता अपने पुत्र के उपहार को देख बहुत ही निराश हुए। उनका विचार था कि हमेशा प्रसन्न रहने से कोई बड़ा फ़ायदा थोड़े ही होने वाला है। वह प्रसन्नता खाने के लिए कभी उपयोगी नहीं बन सकती ; और न इसके द्वारा परिवार का पेट ही भर सकता है।

दोनों बच्चे बड़े होने लगे। दोनों लड़के अपने उपहारों का उपयोग करते हुए आनंद पूर्वक अपने दिन बिताने लगे ; मगर जिराल्डो को रोज़ प्राप्त होने वाले सोने के सिक्के देख फ्रांको के माँ-बाप ईर्ष्या करने लगे। जिराल्डो के माँ-बाप यह सोचकर फ्रांको के खानदान के प्रति लापरवाही दिखाने लगे कि वे तो दिन ब दिन अमीर बनते जा रहे हैं।

थोड़े दिन बाद दोनों युवकों को एक राजा के यहाँ सैनिक बनने का मौक़ा मिला। उस राजा के साथ जिस राजा ने युद्ध किया, उसने उन दोनों युवकों को बंदी बानाया ओर उन्हें अपने बगानों में काम करने भेज दिया।

क़ैदी के रूप में रहते हुए भी फ्रांको को वेणु की वजह से कभी दुख न हुआ। वह अपना वक़्त वेणु बजाते हुए हमेशा मजे में बिताया करता था। लेकिन जिराल्ड़ो को रोज सोने के सिक़्के हाथ लगते थे, लेकिन उसे कोई संतोष न था। एक दिन उसने राजा के पास जाकर पूछा कि उसे गुलामी

से मुक्त करने के लिए राजा को कितने सोने के सिक़्के देने पड़ेंगे ? यह बात सुनने पर राजा को हँसी आ गई। उसने सोचा कि यह कैसे आश्चर्य की बात है कि एक साधारण किसान का बेटा सोने के सिक़्को की बात करता है। फिर भी उस की जांच करने के ख्याल से राजा ने कहा "मुझे साठ सोने के सिक़्के देने होंगे।"

जिराल्ड़े ने कहा–"महाराज, बीस दिन में मैं साठ सिक़्के चुका दूँगा।" ये बातें सुनने पर राजा को आश्चर्य हुआ, फिर भी वह कैसे दे सकता है, इसका पता लगाने के लिए राजा ने अपने अनुचरों को नियुक्त किया। उन लोगों ने जिराल्डो को थैली में से सोने के सिक़्के निकालते देखा और यह खबर राजा को दी। राजा को लगा कि यदि वह अनोखी चमड़े की थैली उस के पास रहेगी तो वह और बड़ा ऐश्वर्यवान बन सकता है।

यों विचार कर राजा ने कहा–"तुम साठ सिक़्कों के बीस गुने ज्यादा सिक्के भी क्यों न दो, मैं तुम्हें छोड़ूंगा नहीं, तुम रोज थैली में से जो तीन सोने के सिक्के निकालते हो, वे मुझे देने पड़ेंगे, वरना तुम्हें कड़ी सजा दूँगा।"

लाचार होकर जिराल्डो रोज़ वह मंत्र पढ़ता, सोने के सिक्के निकालकर राजा को देने लगा।

एक बार राजकुमारी बीमार पड़ गई और वह बीमारी बराबर बढ़ती ही गई।

राजकुमारी दुबली हो गई और हमेशा उदास रहा करती थी। वह कुछ खाती-पीती न थी। दवाइयों का भी उस पर कुछ असर न होता था। आखिर मंत्री ने राजा को सलाह दी–"हमारे क़ैदियों में फ्रांको नामक एक युवक है। वह हमेशा प्रसन्न और सुखी दिखाई देता है; शायद वह कोई सलाह दे सके।"

राजा ने झट फ्रांको को बुलवा कर युवरानी की बात बताई। फ्रांको ने अपना वेणु निकाला और युवरानी के सामने धीरे से बजाया। युवरानी धीरे से मुस्कुरा उठी और खाने को कुछ मांगा।

राजा फ्रांको पर खुश हुआ और उसकी मदद के प्रति कृतज्ञता पूर्वक उसे क़ैद से मुक्त किया। उस वक़्त फ्रांको ने बताया–"महाराज, मुझे तो उस वक़्त ज्यादा प्रसन्नता होगी, जब आप सभी क़ैदियों को मुक्त करेंगे।"

पर राजा ने न माना, क्योंकि यदि वह फ्रांको की बात मान ले तो उसे रोज़ जिराल्डो से जो सोने के सिक्के मिलते हैं, उनसे हाथ धोना पड़ेगा। मगर फ्रांको ने जोर दिया कि सब क़ैदियों को मुक्त करना चाहिए। आख़िर राजा ने सोचा कि फ्रांको की वजह से ही उसकी बेटी खुश है, उसकी इच्छा की पूर्ति करने के ख्याल से राजा ने सभी क़ैदियों को मुक्त किया।

इस पर फ्रांकों और जिराल्डो अपने गाँव के लिए चल पड़े। जब वे एक नदी के पास पहुँचे, तब जिराल्डो ने अपनी थैली निकालकर नदी में फेंक दिया। फ्रांको ने उसकी ओर आश्चर्य के साथ देखा।

जिराल्डो ने कहा–"इस थैली की मुझे जरूरत नहीं है। इसने मेरी बदक़िस्मती का द्वार खोल दिया, मगर मुझे कभी खुशी नहीं दी। देवी ने तुम्हें जो उपहार दिया है, वह सबसे महान है। मनुष्य को धन की अपेक्षा सुख और संतोष की ही बड़ी जरूरत है!"

कुबेर का सरोवर

ब्रह्मदत्त जब काशी राज्य पर शासन करते थे, उन दिनों में बोधिसत्व उनके पुत्र के रूप में पैदा हुए। राजा ने उनका नामकरण महाशासन किया। थोड़े महीने बाद रानी ने एक और पुत्र का जन्म दिया जिसका नाम सोमदत्त रखा गया।

दोनों पुत्रों की पैदाइश के दो साल बाद रानी का देहांत हो गया। इस पर राजा ने दूसरा विवाह किया। कुछ समय बाद नई रानी ने एक पुत्र का जन्म दिया। यह खबर सुनते ही राजा बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने रानी से पूछा–"रानी, इस शुभ अवसर पर तुम कोई वर मांग लो।"

"यह वर मैं अपनी जरूरत के वक़्त मांग लूंगी।" रानी ने जवाब दिया।

छोटी रानी के पुत्र का नाम आदित्य था। उसने राजोचित सारी विद्याएँ सीख लीं। जब आदित्य जवान हो गया, तब एक दिन रानी ने राजा से कहा–"महाराज, आपने आदित्य के जन्म के समय वर मांगने को कहा, अब मैं मांगती हूँ। आप आदित्य को युवराजा के रूप में अभिषेक कीजिए।"

रानी की यह इच्छा सुनकर राजा निश्चेष्ट हो गये और थोड़ी देर सोचकर बोले–"मेरी पहली पत्नी के दो पुत्रों के होते हुए आदित्य को मैं युवराजा कैसे बना सकता हूँ? तुम्हारी यह कामना न्याय संगत नहीं है।"

मगर रानी को जब भी मौक़ा मिलता अपने पुत्र को युवराजा बनाने की इच्छा प्रकट कर राजा को सताने लगी। राजा ने भांप लिया कि रानी अपना हठ नहीं छोड़ेगी। साथ ही उनके मन में यह संदेह भी पैदा हुआ कि रानी के द्वारा बड़े राजकुमारों की कोई हानि भी हो सकती

है । इसलिए वे अपने बड़े पुत्रों को बचाने का उपाय दिन-रात सोचने लगे ।

राजा ने एक दिन अपने दोनों बड़े पुत्रों को बुलवाकर सारी बातें समझाई और बोले–"तुम दोनों थोड़े समय के लिए नगर को छोड़कर कहीं रह जाओ । मेरे बाद तुम्हीं लोगों को यह राज्य प्राप्त होगा, इसलिए उस वक़्त लौटकर राज्य का भार संभाल सकते हो । तब तक तुम दोनों भूल से भी सही राज्य के अन्दर प्रवेश न करना ।"

अपने पिता की इच्छा के अनुसार महाशासन और सोमदत्त नगर को छोड़कर जब राज्य की सीमा पर पहुंचे, तब उन लोगों ने देखा कि छोटा राजकुमार आदित्य भी उनके पीछे चला आ रहा है । तीनों मिलकर कुछ दिन बाद हिमालयों के बीच के जंगलों में पहुँचे ।

एक दिन वे तीनों अपनी यात्रा की थकान मिटाने के लिए एक पेड़ के नीचे बैठ गये । उस वक़्त महाशासन ने आदित्य से कहा–"मेरे छोटे भैया ! उधर देखो, एक सरोवर दिखाई दे रहा है ! तुम वहाँ जाकर अपनी प्यास बुझा लो और हमारे लिए कमल पत्रों वाले दोने में पानी ले आओ ।"

आदित्य जाकर ज्यों ही सरोवर में उतरा, त्यों ही जल पिशाच उसे पकड़ कर जल के नीचे वाले अपने घर में ले गया । बड़ी देर तक आदित्य को न लौटते देख महाशासन चिंतित हुआ और इस बार महाशासन ने सोमदत्त को भेजा । उसको भी जल पिशाच ने पकड़ लिया ।

थोड़ी देर तक इंतजार करने के बाद महाशासन अपने भाइयों को लौटते न देख खतरे की अशंका करके तलवार लेकर खुद चल पड़ा, वह सरोवर में उतरे बिना किनारे पर खड़े हो पानी की ओर परख कर देख रहा था, इसे भांपकर जल पिशाच ने अंदाजा लगाया कि ये अपने भाइयों के जैसे जल्दबाजी में आकर जल में न उतरेंगे ।

इसके बाद जल पिशाच एक बहेलिये का वेष धरकर महाशासन के पास आया और बोला–"खड़े खड़े देखते क्या हो? प्यास लगी है तो सरोवर में उतर कर अपनी प्यास क्यों नहीं बुझाते?"

यह सलाह पाकर महाशासन ने सोचा कि दाल में कुछ काला है। तब बोला–"तुम्हारा व्यवहार देखने पर मुझे शक होता है कि तुमने ही मेरे दोनों भाइयों को गायब कर डाला है।"

"तुम तो विवेकशील मालूम होते हो। मैं सच्ची बात बता देता हूँ, ज्ञानी लोगों को छोड़ बाक़ी सभी लोगों को, जो इस सरोवर के पास आते हैं, पकड़ कर मैं बन्दी बनाता हूँ। यह तो कुबेर का आदेश है!" जल पिशाच ने कहा।

"इसका मतलब है कि तुम ज्ञानियों से उपदेश पाना चाहते हो! मैं तुम्हें ज्ञानोपदेश कर सकता हूँ! लेकिन थका हुआ हूँ।" महाशासन ने कहा।

झट जल पिशाच उसे पानी के तल में स्थित अपने निवास में ले गया। अतिथि-सत्कार करने के बाद उसे उचित आसन पर बिठाया। वह खुद उसके चरणों के पास बैठ गया।

महाशासन ने जो कुछ अपने गुरुओं से सीखा था, वह सारा परम ज्ञान जलपिशाच को सुनाया। दूसरे ही क्षण जलपिशाच बहेलिये का रूप त्यागकर अपने निज रूप में बोला–"महात्मा, आप महान ज्ञानी हैं! मैं आपके भाइयों में से एक को देना

चाहता हूँ। दोनों में से आप किसको चाहते हैं?"

"मैं आदित्य को चाहता हूँ।" महाशासन ने कहा।

बड़े को छोड़ छोटे की मांग करना क्या धर्म संगत होगा?" जलपिशाच ने पूछा।

"इसमें अधर्म की बात क्या है? अपनी माँ की संतान में से मैं बचा हुआ हूँ, ऐसी हालत में मेरी सौतेली माँ के भी एक पुत्र तो होना चाहिए न? मेरी सौतेली माँ ने अपने पुत्र आदित्य के वास्ते मेरे पिताजी से राज्य की मांग की है। हम अपने पिता के आदेश पर ही जंगलों में निवास करने आये हैं! हम अपने भ्रातृ-प्रेम से प्रेरित होकर यह भोला आदित्य हमारे पास चला आया है। अगर हम दोनों बड़े भाई नगर को लौट जाये, तब लोग हमसे पूछे कि आदित्य कहाँ है? तब हमारा यह कहना कहाँ तक न्याय संगत होगा कि जलपिशाच ने उसे निगल डाला है?" यों महाशासन ने जलपिशाच से उल्टा सवाल पूछा।

इस पर जलपिशाच ने महाशासन के चरणों में प्रणाम करके कहा—"आप जैसे महान ज्ञानी को मैंने आज तक कहीं नहीं देखा है, मैं आपके दोनों छोटे भाइयों को मुक्त कर देता हूँ। जब तक आप लोग इस जंगल में रहेंगे तब तक मेरे अतिथि बनकर रहिए!"

इस पर महाशासन और उसके छोटे भाई जलपिशाश के अतिथि बनकर रह गये। थोड़े समय बाद उन्हें खबर मिली कि उनके पिता ब्रह्मदत्त का स्वर्गवास हो गया है। इस पर महाशासन अपने दोनों छोटे भाइयों तथा जलपिशाच को साथ ले काशी राज्य को चले गये।

महाशासन का राज्याभिषेक हुआ। तब उसने सोमदत्त को अपने प्रतिनिधि के रूप में तथा आदित्य को सेनापति के पद पर नियुक्त किया। अपना उपकार करने वाले जलपिशाच के वास्ते एक सुंदर निवास का प्रबंध किया और उसकी सेवा के लिए नौकर नियुक्त किया।

हर्षवर्द्धन

चौदह सौ साल पहले प्रभाकरवर्द्धन नामक राजा स्थानेश्वर राज्य पर राज करते थे। वह राज्य छोटा था, लेकिन संपन्न था। उस राजा के राज्यवर्द्धन और हर्षवर्द्धन नामक दो पुत्र तथा राजश्री नामक एक पुत्री थी। कन्याकुब्ज के राजा ग्रहवर्मा के साथ राज्यश्री का विवाह किया गया।

ग्रहवर्मा विवाह के बाद अपनी पत्नी को लेकर कन्याकुब्ज को लौट आया। इसके थोड़े दिन बाद माल्व राजा ने कन्याकुब्ज को घेर लिया। उस समय जो लड़ाई हुई, उसमें ग्रहवर्मा मारे गये।

विजयी माल्व राजा राज्यश्री को बन्दी बनाकर उसके हाथों में हथकड़ियाँ लगवाकर अपने नगर में ले गये। यह समाचार सुनकर राजा प्रभाकरवर्द्धन तथा उनके पुत्र अपार दुख में डूब गये।

स्थानेश्वर के बड़े युवराजा राज्यवर्द्धन ने एक बड़ी सेना के साथ माल्व राज्य पर हमला किया और शत्रु राजा को हराया । राज्यश्री बंधन से मुक्त हो गई । भाई-बहन एक दूसरे को देख आँखों में आँसू भरने लगे । राज्यवर्द्धन फिर से स्थानेश्वर के लिए निकल पड़े ।

गोंडवन प्रदेश के राजा शशांक के मन में कन्याकुब्ज के साथ माल्व देश पर भी विजय पाने की कामना हुई । वह बड़ी सेना के साथ धोखे से आया और अचानक राज्यवर्द्धन की सेना पर टूट पड़ा । उस युद्ध में राज्यवर्द्धन मर गये और राज्यश्री बचकर भाग गई ।

इन दुर्घटनाओं के समय ही राजा प्रभाकरवर्द्धन का देहांत हो गया । मंत्री और सामंतों ने जोर देकर हर्षवर्द्धन का राज्याभिषेक किया । अपनी सोलह साल की उम्र में ही हर्षवर्द्धन स्थानेश्वर के राजा बन गये ।

राज्य ग्रहण करते ही हर्षवर्द्धन ने अपनी बहन राज्यश्री का अन्वेषण शुरू किया। वह एक भयानक जंगल में पहुँचे और वहाँ पर खूँख्वार जानवरों को पालतू जानवरों की भांति स्वेच्छापूर्वक विचरण करते देख विस्मय में आ गये।

हर्षवर्द्धन के मन में यह अनुमान हुआ कि इस विचित्र दृश्य का कारण समीप में बसने वाले कोई महा पुरुष होंगे। वह ज्योंही थोड़ी दूर आगे बढ़े, त्यों ही कुछ सन्यासी चले आये और हर्षवर्द्धन को अपने गुरू के पास ले गये। उसी वक्त एक और सन्यासी वहाँ आ पहुँचा। उसने बताया कि एक स्थान पर एक युवती अग्नि-प्रवेश करने की तैयारियाँ कर रही है।

इस पर हर्षवर्द्धन तथा सन्यासियों के गुरु तत्काल उस प्रदेश की ओर बढ़े। वह स्त्री और कोई न थी, बल्कि हर्षवर्द्धन की बहन ही थी। वह अपना आत्म त्याग करने के लिए चिता बना कर आग सुलगाने को थी। जब वह अग्नि प्रवेश करने को थी, ठीक उसी वक्त गुरु तथा हर्षवर्द्धन राज्यश्री के पास पहुँचे और उसे अग्नि प्रवेश करने से रोका।

हर्षवर्द्धन अपनी बहन को स्थानेश्वर ले आये और अपनी अभिभाविका के रूप में रहने को मनवा लिया। उसे यह भी बताया कि थोड़े समय बाद मैं भी राज्य-शासन की जिम्मेदारी से मुक्त हो जाऊँगा, तब दोनों वनवास करते हुए ध्यान में अपना समय बितायेंगे

इसके थोड़े दिन बाद हर्षवर्द्धन ने अपने भाई का वध करनेवाले शशांक को युद्ध में हराया। साथ ही अनेक राजाओं को हराकर एक साम्राज्य के चक्रवर्ती बन बैठे। उन्होंने राज्य के सभी धर्मों के प्रति उदारता पूर्ण व्यवहार किया।

हर्षवर्द्धन ने कई बार अपनी सारी संपत्ति को पंडितों तथा गरीबों में बांट दिया। ऐसे संदर्भों में एक बार उन्होंने अपना सर्वस्व दान कर दिया और अपनी बहन राज्यश्री के हाथों से सिर्फ़ पहनने के लिए कपड़े मात्र ग्रहण किये।

क़िस्मत का खेल

प्राचीन काल में कोसल देश में तीन मित्र रहा करते थे। उनमें से नंद और सुनंद नामक युवक अमीर थे, पर तीसरा मित्र आनंद गरीब था। वह रस्से बटकर अपने दिन गुजार देता था। नंद और सुनंद ने सोचा कि किसी भी उपाय से सही आनंद को भी अमीर बना देना है।

नंद ने कहा—"थोड़ी पूंजी होने से कोई भी आदमी अमीर बन सकता है। इसलिए हम आनंद को थोड़ा मूल धन देंगे।"

"दोस्त! ऐसे कितने अमीर नहीं हैं जो थोड़े दिनों में गरीब बन जाते हैं। इसलिए मेरा ख्याल है कि क़िस्मत अच्छी रही, तो बड़ी भारी पूंजी के बिना भी कोई भी अमीर बन सकता है।" सुंनद ने कहा।

अपनी बात को सत्य करने के ख्याल से नंद ने दूसरे ही दिन आनंद को दो सौ सिक्के दिये और सलाह दी कि इस मूल धन से कोई व्यापार करके धन कमा ले। आनंद यह सलाह पाकर बड़ा खुश हुआ और उन दो सौ सिक्कों में से दस सिक्के अपने खर्च के लिए रख लिये, बाकी सिक्के अपनी पगड़ी में बांध लिया, तब घर के लिए जरूरी चीजें खरीदने बाजार की ओर चल पड़ा। पर उसी वक़्त दुर्भाग्य से एक पक्षी कहीं से उड़ कर आया और पगड़ी की पोटली को उड़ा ले गया। आनंद अपने एक सौ नब्बे सिक्के खोकर बड़ा दुखी हुआ।

इस घटना के थोड़े दिन बाद नंद और सुनंद आनंद के घर आये ओर अपने दोस्त की हालत में कोई सुधार न पाकर इसका कारण पूछा।

"मेरी किस्मत खोटी है। मैं ने सारा, धन पगड़ी में लपेट लिया, मगर कोई पक्षी आकर उसे उड़ा ले गया।" आनंद ने चितापूर्ण स्वर में उत्तर दिया।

२५ वर्ष पुरानी चन्दामामा की कहानी

इस बात पर नंद ने विश्वास किया लेकिन सुनंद यक़ीन नहीं कर पाया। उसने सोचा कि आनंद ने उस धन का दुरुपयोग किया होगा। नंद ने फिर से आनंद को दो सौ सिक्के देकर समझाया—"इस बार तुम इस धन को सुरक्षित रख लो, इस पूंजी से तुम ज्यादा धन कमा लो।"

इस बार भी आनंद ने अपने घर के खर्च के लिए थोड़े से सिक्के ले लिये, और बाकी सिक्के चोकर की टोकरी के नीचे छिपा लिये। तब घर के लिए ज़रूरी चीजें खरीदने के लिए बाजार की तरफ़ चल पड़ा। उस ने बाजार से लौटकर देखा, टोकरी एक दम गायब थी। उसने अपनी पत्नी से पूछा कि टोकरी कहाँ गई?

"घर में नमक चुक गया था। पास में पैसे न थे, इसलिए चोकर की टोकरी बेचकर मैंने दो सेर नमक खरीद लिया।" आनंद की पत्नी ने सच्ची बात बताई।

इस पर आनंद के दुख की कोई सीमा न रही। उसने यही फ़ैसला किया कि धन बचाने की क़िस्मत उसे प्राप्त नहीं है।

थोड़े दिन और बीत गये। नंद और सुनंद ने आनंद के घर आकर सारी बातें जान लीं। आनंद पहले से ही ज्यादा कंगाल जैसे दीखा। उसने फटे कपड़ों पर टांके तक लगवाये न थे। इसकी वजह यह थी कि घर में सुई तक न थी।

सुनंद ने आनंद के हाथ एक सुई देकर समझाया—"तुम इसे अपनी पत्नी के हाथ

देकर फटे कपड़ों पर टांके लगवा लो।"

उसी दिन रात को पड़ोसी घर के मछुए की पत्नी आनंद की पत्नी के पास आई और बोली–"दीदी, तुम्हारे घर में सुई हो तो दे दो, कल सवेरे मेरे घर के लोग जाल लेकर मछली पकड़ने जा रहे हैं। जाल फट गया है, टांके लगाने हैं। जाल में पहली बार जो मछलियां फंसेंगी, वे सब तुम्हें दे दूंगी।"

इस पर आनंद की पत्नी ने सुई लाकर मछुआइन को उधार में दे दी।

दूसरे दिन शाम को मछुआ मछलियों के साथ घर लौटा और अपनी लड़की के हाथ आनंद के घर एक बहुत बड़ी मछली भेज दी। मछली की तरकारी बनाने के ख्याल से आनंद की पत्नी ने उसे काटा, आश्चय की बात थी कि मछली के अन्दर कांच के एक ढेले जैसी चीज़ दिखाई दी। उस कांच के ढेले को ले जाकर आनंद के बच्चे गली में खेल रहे थे, तब उस रास्ते से गुजरने वाले एक जौहरी ने उसे देखा, तब आनंद के पास आकर बोला–"आनंद, कांच का वह टुकड़ा मेरे हाथ बेच दोगे तो मैं तुम्हें तीन सौ सिक्के दे दूंगा।"

आनंद ने सोचा कि कांच का वह टुकड़ा बड़ा मूल्यवान होगा, यों सोचकर आनंद ने उसे जौहरी के हाथ बेचने से इनकार किया। इसके बाद उसने उसी दिन उस कांच के टुकड़े को शहर में ले जाकर एक बड़े जौहरी को दिखाया।

दर असल वह एक अमूल्य हीरा था। जौहरी ने बीस हज़ार सिक्के देकर आनंद से वह हीरा खरीद लिया। आनंद ने उस धन से मकान, खेत व बगीचे खरीदे। रस्से बटने के लिए लकड़ी से यंत्र बनवाये। इस तरह रस्सों का उद्योग शुरू करके आनंद एक बहुत बड़ा अमीर बन बैठा।

आनंद को अचानक अमीर बन जाने की खबर पाकर उसके दोस्त नंद और सुनंद उसे देखने आ पहुँचे।

नंद ने पूछा–" मैंने तुम्हें जो सिक्के दिये थे, उसी पूंजी से तुम अमीर बन गये हो न?"

आनंद ने शुरू से आखिर तक सारी कहानी सुनाई। इस पर सुनंद ने कहा– " क़िस्मत ने जब साथ दिया, तब मेरी दी हुई सुई के द्वारा ही आनंद धन कमा सका है!"

पर इस बार आनंद की बातों पर नंद यक़ीन नहीं कर पाया। उसने सोचा कि उसने आनंद को जो धन दिया है, उस पूंजी से ही वह अमीर बन गया है, मगर इस असली बात को छुपाने के लिए ही आनंद झूठ बोल रहा है।

इसके बाद तीनों मित्र आनंद के नये मकान को देखते उसके पिछवाड़े में पहुँचे। उसी वक़्त आनंद के बच्चे ने एक पेड़ पर चढ़ कर एक घोंसले को नीचे गिराया। उसमें उन्हें आनंद की पगड़ी दिखाई दी। उसके एक कोने में एक पोटली मिली जिसमें एक सौ नब्बे सिक्के थे। वहाँ से वे लोग मवेशी खाने में पहुँचे, उसी वक़्त आनंद का नौकर बाजार से चोकर की एक टोकरी खरीद लाया। वह टोकरी में से चोकर निकाल कर नांद में डाल रहा था, तब सोने के कुछ सिक्के उसके हाथ लगे। इस पर उसने टोकरी को उलट कर देखा, तब उसे आनंद के द्वारा दूसरी बार खोये गये एक सौ नब्बे सिक्के मिल गये।

इसे देखकर नंद को आनंद की बातों पर विश्वास जम गया। तब उसने सोचा– 'यदि क़िस्मत साथ दे तो अमीर बनने के लिए एक सुई भी कारणभूत बन सकती है!'

लालच का फल

एक बार एक गरीब आदमी ने अपने सारे परिवार को भूखा रख कर एक साधू को भर पेट खाना खिलाया। साधू ने लौटते वक्त उसे दो मंत्रों का उपदेश देकर समझाया कि ये दो वर उसकी दो इच्छाओं की पूर्ति करेंगे।

गरीब आदमी एक साथ अमीर बनना चाहता था, इसलिए उसने एक मंत्र जाप कर उसका घर सोने से भर जाने की कामना की। मंत्र के प्रभाव से ऐसा ही हुआ। पर गरीब आदमी के मन में यह डर पैदा हुआ कि इतना सारा सोना उसके यहाँ देख राजा उसे चोर समझ बैठेंगे और उसे कारागार में डालने का भी खतरा बना रहेगा।

इस विचार के आते ही गरीब ने दूसरा मंत्र जाप कर यह इच्छा प्रकट की कि "यह सोना मुझे छोड़कर किसी दूसरे को दिखाई न दे।"

दूसरे ही क्षण मंत्र सफल हुआ। उस दिन से वह सोना उस गरीब को छोड़ किसी को दिखाई न देता था, इस कारण वह गरीब हमेशा के लिए गरीब ही बना रहा।

चोर और बिच्छू

आधी रात के वक़्त सुजाता जब गहरी नींद सो रही थी, तब बगल में से "बाप रे बाप" चीख सुनकर चौंककर जाग उठी। सिरहाने पर अंधेरे में कोई आदमी खड़ा हुआ था और हाथ झाड़ते दिखाई दिया। उसे देख सुजाता का कलेजा कांप उठा।

उस वक़्त घर में सुजाता अकेली थी। उसका पिता पड़ोसी गाँव में कोई रिश्ता ठीक करने गया था। जाते वक़्त उसने नौकरानी को समझाया कि वह भी सुजाता के साथ रात को सोये। लेकिन अचानक नौकरानी का पति बीमार पड़ा, इसलिए वह अपने घर चली गई थी। इस कारण सुजाता को अकेले ही रहना पड़ा। चोर मौक़ा पाकर रसोई घर के खपरैल हटाकर घर में घुस आया था।

सुजाता डर के मारे चकित रह गई। चोर ने कहा—"जल्दी उठ जाओ, तुम्हारे सर के नीचे कोई बड़ा बिच्छू है।" वह पीड़ा के मारे बराबर अपना हाथ झाड़ रहा था। जब वह सुजाता के सिरहाने चाभियों के गुच्छे को ढूंढ रहा था, तब बिच्छू ने उसे डंक मार दिया।

सुजाता दिये की बत्ती बड़ी करके खाट पर से उतर पड़ी। चोर ने तकिये को हटाया, काले बिच्छू को मार डाला।

सुजाता बिच्छू के नाम से ही डरती थी। अगर वक़्त पर चोर न पहुँचता तो वह बिच्छू सुजाता को जरूर डंक मार बैठता। इस वजह से उसके मन में कृतज्ञता का भाव पैदा हो गया।

चोर को अभी तक पीड़ा के मारे परेशान देख सुजाता ने हड़ को पत्थर पर घिसकर चोर के हाथ पर मल दिया और पुराने चीथड़े जलाकर उसका धुआँ कहते बैठी रह गई।

धनपाल सिंह

चोर ने सुजाता से पूछा–"इस बड़े घर में तुम अकेली रहती क्यों हो? क्या तुमको डर नहीं लगता?"

"वैसे मैं हमेशा अकेली नहीं रहती। आज मेरे पिताजी पड़ोसी गाँव गये हैं! तुम देखने में पढ़े-लिखे मालूम होते हो! चोरी करने कैसे निकल पड़े?" सुजाता ने पूछा।

चोर ने कहा–"मेरा नाम बंसीलाल है। मेरी नानी ने लाड़-प्यार से मुझे पाल-पोसकर बड़ा किया। हद से ज्यादा लाड़-प्यार दिखाने की वजह से मेरी पढ़ाई बीच में ही छूट गई। बुरे लड़कों की संगत में पड़कर मैं नानी की पेटी से छुट्टे पैसे चुराने लगा। इधर कुछ दिन पहले मेरी नानी मर गई। मैं अपने गाँव को छोड़ इस शहर में आ गया। यहाँ पर मुझे कोई नौकरी नहीं मिली। मैं तीन दिन भूखा रहा, आखिर तुम्हारे घर में चोरी करने निकल पड़ा।"

सुजाता को उसकी हालत पर दया आ गई। उसने थोड़े फल लाकर उसके आगे रख दिये। वह पीड़ा का अनुभव न करे, इस विचार से वह सबेरे तक उसे कहानियाँ सुनाते रह गई। बंसीलाल वैसे देखने में सुंदर है, मगर उसकी चोरी करने की वृत्ति पर सुजाता को घृणा आ गई।

वह बोली–"सवेरा हो जाने पर मेरे पिताजी आ जायेंगे। मैं अपनी सहेली के

भाई के रूप में अपने पिता के साथ तुम्हारा परिचय कराऊँगी। मैं उनसे प्रार्थना करूँगी कि तुम्हें वे कोई नौकरी दिलावे।"

बंसीलाल ने खुशी के साथ मान लिया और सुजाता के पिता के आने के पहले ही उसने रसोई घर के खपरैल ठीक कर दिये। दूसरे दिन सुजाता का पिता घर लौट आया। अपने पिता के चेहरे को देखते ही सुजाता ने भांप लिया कि वह रिश्ता क़ायम नहीं हुआ है। उसने अपने पिता को बंसीलाल का परिचय अपनी सहेली के भाई के रूप में करा कर बताया कि वह युवक नौकरी की खोज में आया है। सुजाता के पिता ने बंसीलाल से कई

सवाल किये। उसे बंसीलाल के जवाब और उसकी विनयशीलता पसंद आ गई। उसके दिमाग में यह विचार आया कि बंसीलाल को अपना दामाद बना ले तो कैसे अच्छा होगा।

इसके बाद सुजाना के पिता ने अपनी बेटी को अलग बुलाकर समझाया–"बेटी, तुम इस युवक को अपनी सहेली का भाई बताती हो। यह तो देखने में अच्छा लगता है। इसका व्यवहार भी साधु प्रकृति का मालूम होता है। ऐसे व्यक्ति को कोई नौकरी दिलाना कोई बड़ी बात नहीं है। मुझे तो यह युवक पसंद आ गया है। तुम्हें भी अगर पसंद आवे तो मैं तुम दोनों की शादी कर सकता हूँ।"

सुजाता अपने पिता को उसी वक़्त अपना निर्णय न बता कर बचने की कोशिश करते हुए बोली–"पिताजी, अभी मेरी शादी की जल्दी क्यों आ पड़ी है?"

क्योंकि बंसीलाल के प्रति सुजाता का विश्वास अभी तक पूर्ण रूप से जमा न था। उसने सोचा कि बंसीलाल जिस वातावरण में पला है, जैसी बुरी संगति में पला है, वह जल्दी छूटनेवाली नहीं है। यों विचार कर उसने उस दिन शाम को बंसीलाल को अपना सारा बगीचा दिखाया। शाम को घर लौटने पर उसने संदूक में रखे अपने सारे गहने दिखाकर कहा–"ये गहने मेरी माँ के हैं। इससे ज्यादा कीमती चीज़ें हमारे घर में नहीं हैं!"
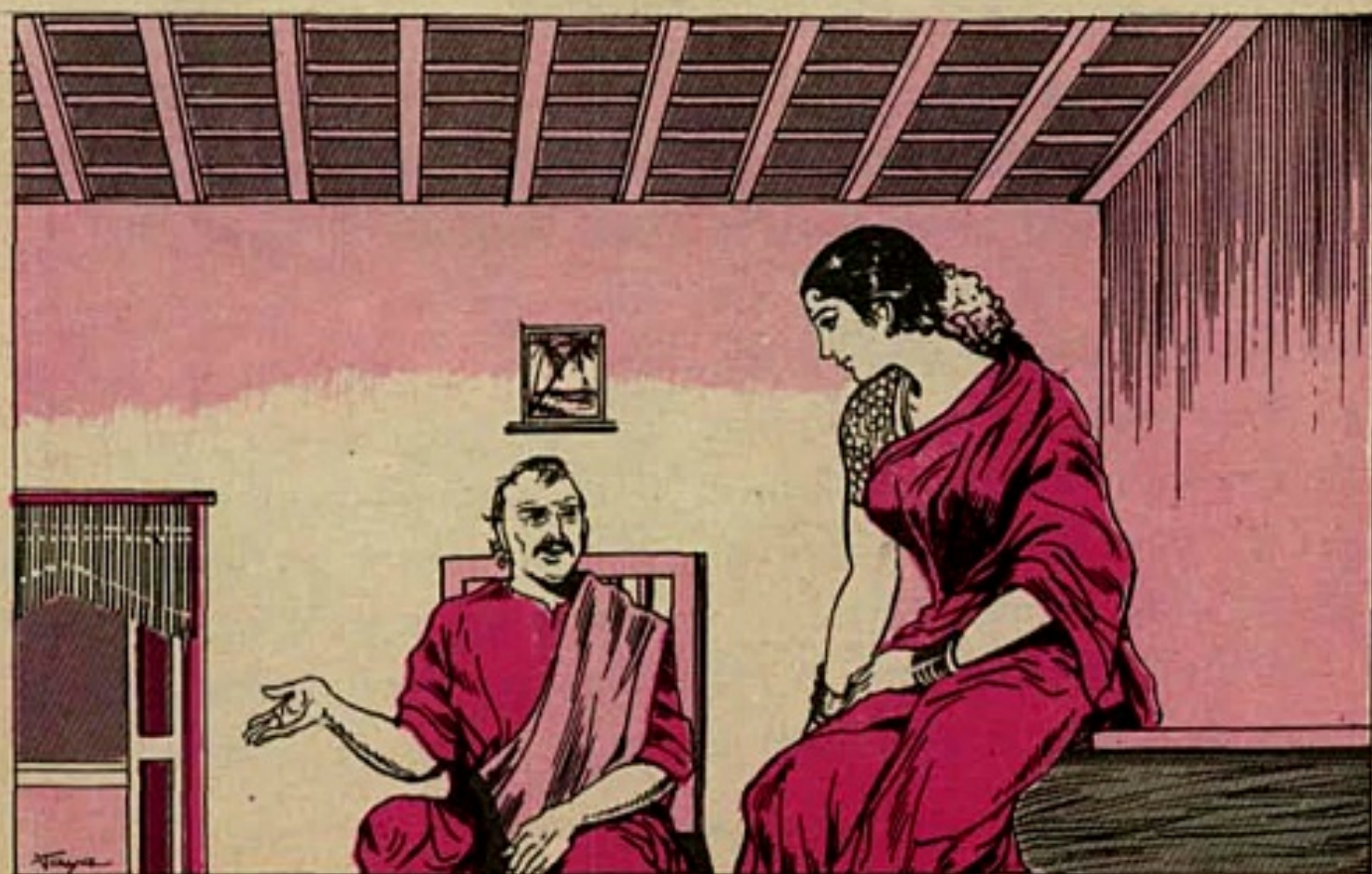
उस दिन रात को बंसीलाल को नींद नहीं आई। उसकी आँखों के सामने सुजाता के द्वारा दिखाये गये गहने चमकने लगे। उसके दिमाग में यह ख़्याल आया कि उन गहनों को उठा ले जाकर बेच कर उस धन से आराम से वह अपनी ज़िंदगी काट सकता है। ऐसा न करे तो उसे ज़िंदगी भर दूसरों के अधीन नौकरी करते हुए तकलीफ़ें झेलनी पड़ेगी।

यों निश्चय करके बंसीलाल आधी रात के वक़्त गहनों का संदूक़ लेकर पिछवाड़े के रास्ते से भाग गया। थोड़ी दूर जाने पर उसने सोचा कि गहनों के संदूक़ को अपने पास रखना खतरे से खाली नहीं है, इस विचार के आते ही संदूक़ में से सिर्फ़ गहने निकाल कर ले जाना चाहा। वह संदूक़ खोलते ही चौंक पड़ा, क्योंकि गहनों के बीच एक काला बिच्छू था।

कहीं बिच्छू फिर से उसे डंक न मारे, इस डर से बंसीलाल ने झट से संदूक को नीचे गिराया। इस पर गहनों के साथ बिच्छू नीचे गिर पड़ा, मगर वह हिला तक नहीं। उसे बिच्छू का खिलौना समझकर बंसीलाल ने बिच्छू को हटाया और गहनों को उठाने लगा। तब उसे गहनों के बीच एक चिट्ठी दिखाई दी। वह चिट्ठी सुजाता की लिखी हुई थी। उसमें यों लिखा था : "बिच्छु को तुम खिलौना समझकर खुश होगे। मगर बिच्छू के जैसे दीखकर डंक न मारोगे तो कोई बात नहीं, लेकिन

केंचुआ जैसे दिखाई देकर जहर उगलोगे तो खतरा पैदा हो सकता है। कल तुम चोर जैसे दिखाई दिये, मगर कोई हानि नहीं की। आज इस घर के दामाद बन जाने का मौक़ा पाकर भी तुम गहने चुराकर ले जा रहे हो। तुम मेरे पिता को पसंद आये, लेकिन तुम जैसा व्यक्ति मेरा पति बने बिना भाग रहा है, इस पर मैं बहुत खुश हूँ।"

यह चिट्ठी पढ़ कर बंसीलाल चिंता में पड़ गया। सुजाता के साथ शादी करके आराम से नौकरी करते हुए सुख पूर्वक जिंदगी बिता सकने वाला वह यों चोर के रूप में जीने की इच्छा रखने के एवज में अपने आप पर घृणा करने लगा। इसके बाद उसने निर्णय कर लिया कि सारे गहने सुजाता को सौंप कर उससे माफ़ी मांग करके अपने रास्ते चले जावे।

इस ख्याल से बंसीलाल संदूक़ को लेकर सुजाता के घर लौट रहा था, तभी सुजाता के पिता पानी पीने के लिए रसोई घर में आया। बंसीलाल को देख पूछा—"तुम इस आधी रात के वक़्त गहनों का संदूक़ लेकर कहाँ गये थे?"

बंसीलाल इस सवाल का जवाब देने को घबरा रहा था, तभी सुजाता ने वहाँ पहुँच कर समझाने के स्वर में कहा—"पिताजी, मेरे हाथ की चूड़ियाँ चुभ रही थीं; मैंने उन्हें संदूक़ में रखना चाहा। पर न मालूम कैसे उसके अन्दर एक बिच्छू घुस आया था। उसे मारने के लिए बंसीलाल गहनों का संदूक़ बाहर ले गया।"

अपने पिता के चले जाने के बाद सुजाता ने मुस्कुराते हुए बंसीलाल से कहा—"तुम इधर-उधर देखते क्या हो? अन्दर आ जाओ। बिच्छू को पूर्ण रूप से मार डाला है न? याद रखो कि किसी चीज़ को आधा मारना महान पाप है।"

बंसीलाल ने भांप लिया कि उसके भीतर की चोरी करने की वृत्ति पर सुजाता व्यंग्य कस रही है, फिर भी सुजाता ने उसे क्षमा कर दिया है, इस बात पर वह मन ही मन बड़ा खुश हुआ।

होशियार पत्नी

हमेशा गपशप करते दोस्तों के साथ वक़्त बिताने वाले गौरीशंकर के मन में अचानक व्यापार करने की बात सूझी। उसका ससुराल संपन्न था। गौरीशंकर ने अपनी पत्नी से कहा—"आवारा गर्दी से तंग आ गया हूँ। मैं कोई न कोई व्यापार करना चाहता हूँ। तुम अपने पीहर जाकर एक हज़ार रुपये लेती आओ।"

गौरीशंकर की पत्नी स्वभाव से बड़ी अक़्लमंद थी। उसने सोचा कि उसका पति जो व्यापार करना चाहता है, उस संबंध में कोई निर्णय लिये बिना इस क्षेत्र में कूद पड़ना चाहता है, इसलिये उसे अच्छी तरह से सबक़ सिखाना चाहिए।

यों विचार कर लक्ष्मी अपने पीहर चली गई। दो महीने बीत गये, पर वह लौट कर नहीं आई। अब लाचार होकर गौरीशंकर खुद अपने ससुराल चल पड़ा।

ससुराल पहुँचते ही लक्ष्मी को डांटने लगा—"क्या तुम जिस काम से अपने पीहर आई, उसे भूल गई हो? दो महीने से तुम अपने मायके में आराम कर रही हो?"

लक्ष्मी शांत स्वर में बोली—"आप ने एक हज़ार रुपये लाने के लिए मुझे भेजा। मैंने यह बात अपनी माँ को बताई। माँ ने कहा कि अगर मुझे वह एक हज़ार रुपया देना चाहे तो उसे अपने मायके से कम से कम दो हज़ार रुपये ले आना होगा। यही बता कर वह अपने पीहर चली गई। जब मेरी माँ ने अपनी माँ को याने मेरी नानी को बताई, तब वह यह कह कर अपने मायके चली गई कि वह अपने मायके से तीन हज़ार लाएगी, तभीं यह रक़म वह दे सकती है! मेरी नानी अभी तक अपने मायके से नहीं लौटी, मेरी माँ जब फिर अपने मायके जाकर रुपये ले आएगी, तब मैं रुपये

लीला गौतम

लेकर हमारे घर आना चाहती थी, इसीलिए देरी हो गई।"

गौरीशंकर सर खुजला कर बोला–"हाँ, तुम्हारा कहना तो ठीक है। लेकिन क्या तुमने यह नहीं सोचा कि तुम यहीं पर बैठी रहोगी तो वहाँ पर मुझे रसोई बनाकर खिलानेवाली कौन है?"

लक्ष्मी ने कहा–"कमाकर लानेवाले हो तो रसोई बनाकर खिलानेवालों की कमी क्या है? मगर कमाने और खिलाने के दोनों काम मैं कैसे कर सकती हूँ?"

लक्ष्मी का उत्तर सुनने पर गौरीशंकर को अपनी असमर्थता का बोध हुआ। तब बोला–"अच्छी बात है, जो हुआ सो हो गया। अब तुम हमारे घर चलो।" यों कहकर अपनी सास से विदा लेने गया।

सास ने उदासपूर्ण चेहरा बनाकर कहा–"बेटा, तुम बुरा मत मानो! मायके से रुपये मिलते ही मैं ज़रूर तुम्हारे पास भेज दूंगी। मेरे पति बिलकुल नाक़ाबिल हैं, इसलिए वे तुरंत रुपये न दे सके। इस कारण मुझे अपने मायके जाकर रुपये लाने की नौबत आ पड़ी। समझ लो कि जो लोग औरतों के पैसों पर अपनी जिंदगी काटना चाहते हैं, उनकी यही हालत होती है।"

सास की बातें वैसे मीठी थीं, लेकिन उनके भीतर जो व्यंग्य और चेतावनी भरी थी, उसे गौरीशंकर समझ गया। लज्जा के मारे अपना सिर झुका कर बोला–"माँजी, आप रुपयों के वास्ते परेशान न होइयेगा। अगर मनुष्य के भीतर ईमानदारी और लगन हो, इन बातों पर विश्वास जम जाने पर कोई भी कर्ज़ देगा। आप अपनी तबीयत का पूरा ख्याल रखियेगा।" यों कह कर वह अपनी पत्नी के साथ बैल गाड़ी पर सवार हो घर लौटा।

इसके बाद फिर कभी गौरीशंकर ने रुपये के वास्ते अपनी पत्नी को उसके मायके में नहीं भेजा। अपना वक़्त गपशप लड़ाने में बरबाद किये बिना छोटा-मोटा व्यापार शुरू करके कुछ ही दिनों में वह अपने परिवार को चलाने लायक़ बन गया।
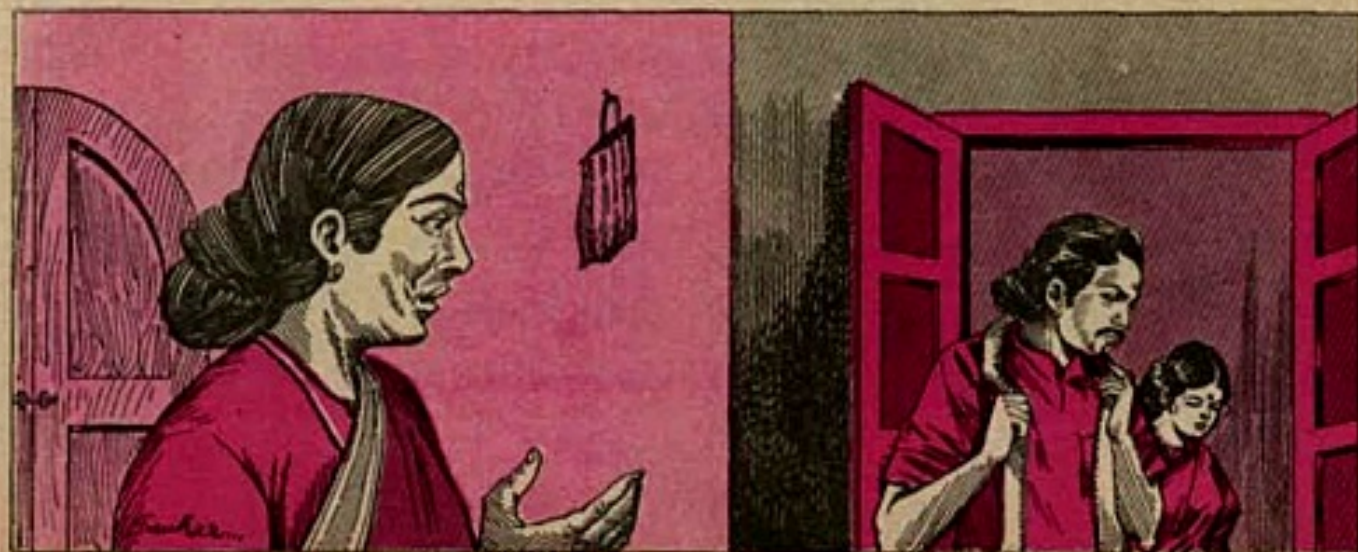
विघ्नेश्वर

पार्वती पल भर में अपने दुख को भूल गई, अपने पुत्र को गोद में लेकर नज़र उतारी। शिवजी ने अपने दोनों हाथ बढ़ा कर शिशु को पुकारा। विघ्नेश्वर डगमगाने वाले क़दम बढ़ाते शिवजी की तरफ़ जाने लगा, इस पर सब लोग उसकी इस प्रिय चेष्टा पर मुग्ध हुए।

"बेटा, विघ्नेश्वर, तुम्हें पुत्र के रूप में पाकर हम धन्य हो गये। हे चिरंजीव!" यों कह कर शिवजी ने उसे चूम लिया। इस पर विघ्नेश्वर झट नीचे कूदकर बोला–"पिताजी, आप यह क्या कह रहे हैं? मैं तो आप का पुत्र हूँ। सचमुच में धन्य हो गया हूँ।" यों कह कर विघ्नेश्वर ने अपनी छोटी सी सूंड बढ़ा कर पार्वती और परमेश्वर के चरणों को लपेट लिया, उन्हें आँखों से लगा कर प्रणाम किया। इस के बाद उसने विष्णु को प्रणाम किया।

विष्णु ने कहा–"आओ, मेरे भानजे।" कहते उसे अपने निकट लेकर आशीर्वाद दिया–"कल्याणमस्तु।"

उस वक़्त विष्णु की कांति में विघ्नेश्वर नीलाकाश के रंग में दिखाई दिया। सब को ऐसा प्रतीत हुआ कि विष्णु तथा विघ्नेश्वर के बीच कोई समानता है। वही मामा की आकृति की समानता थी।

इस के बाद विनायक ने ब्रह्मा को प्रणाम किया। ब्रह्मा ने उस के गालों पर चुटकी देते आशीर्वाद दिया–"हे गणपति, तुम सब लोगों से प्रथम पूजा प्राप्त कर लो।"

५. विजयी विघ्नेश्वर

फिर विघ्नेश्वर ने लक्ष्मी तथा सरस्वती को प्रणाम किया। उन दोनों ने विघ्नेश्वर को गोद में लिया। तब बोलीं–"हम सास-बहू के झगड़े छोड़ कर विघ्नेश्वर के दोनों तरफ़ इसी प्रकार मैत्री भाव से रहेंगी।" फिर पार्वती को देख बोलीं– "पुत्र गणपति ने इस के पहले बताया है कि हम तीनों मातायें एक ही माँ से पैदा हुई हैं! इसके बाद हम तीनों अलग-अलग रूप से याने क्षीर सागर से लक्ष्मी, ब्रह्मा की जिह्वा से सरस्वती के रूप में वाणी, पहले दक्ष की पुत्री सतीदेवी के रूप में उमा– इस रूप में अवतरित हुई हैं! जयलक्ष्मी नामक सिद्धि, विद्यावती नामक बुद्धि विनायक के योग्य पत्नियाँ हैं! अब हमें विघ्नेश्वर के विवाह का वैभव देखना बाकी रह गया है।"

"इस पर लक्ष्मी बोली–"मैं लक्ष्मीकर बने हुए विघ्नेवर पर विश्वास करने वालों के बीच स्थाई रूप से रहूँगी। सिद्धि स्वरूपिणी जयलक्ष्मी मेरी ही अंश है और जो विनायक की पत्नी बनने जा रही है।"

सरस्वती ने कहा–"विघ्नेश्वर ज्ञान प्रदाता हैं और विज्ञानदायक हैं। वर्णमाला का अभ्यास कराने के पूर्व बच्चों के द्वारा हल्दी के ढेले याने विघ्नेश्वर की पूजा करा कर तब ॐ नमः लिखना होगा। मेरी अंश वाली विद्यावती बुद्धिरूपिणी है, जो विनायक की नायकी याने पत्नी है।"

इस पर विघ्नेश्वर ने अबोध जैसा चेहरा बनाकर सबकी ओर एक बार दृष्टि दौड़ा कर कहा–"आप लोग देख रहे हैं न? बड़ों का यह व्यवहार कैसा है? विवाह करके ये लोग जो यातनाएँ झेल रहे हैं, वे यातनाएँ बच्चे भी झेल लें, इस विचार से जल्दी मचा रहे हैं, चैन से उन्हें रहने भी नहीं देते। तिस पर माताओं के लिए तो और जल्दी आ पड़ी है।"

ये बातें सुन विष्णु बोले–"अबे भोले! ऐसी बात नहीं है! अणिमा आदि सिद्धियों तथा आठ प्रकार के ऐश्वर्यों के लिए मूल

बनी सिद्धियां आठ हैं! वे सुंदर नक्षत्र बन कर पूर्ण चन्द्रमा की सेवा करने के समान उनके द्वारा तुम्हारी सेवा करते हमें देखने की जल्दी है! यह हमारा उतावलापन है!"

विघ्नेश्वर ने कहा–"ऐसी बात है! आप कृष्णावतार के समय अष्ट महर्षियों के साथ यातनाएँ झेलते आनंद लूट सकते हैं, देखेंगे।"

विष्णु ने मंदहास करते हुए कहा– "तुम्हारा वचन सदा सत्य होता है, पर तुम्हें दस वधुओं के साथ विवाह करना ही पड़ेगा।"

"तब तो कहावत है न, विघ्नेश्वर की शादी में एक हजार विघ्न हैं, इसके अनुसार मुझे ही विघ्न पैदा करने होंगे।" विघ्नेश्वर ने कहा।

"हज़ार नहीं, एक करोड़ विघ्न भले ही पैदा हो जाये, विघ्नेश्वर का विवाह रुकेगा नहीं।" यों ब्रह्मा के स्वर में स्वर मिला कर सबने कहा।

इस पर नारद ने आगे बढ़कर कहा– "हे विघ्नेश्वर! आप तो वाचालता में कहीं मुझसे बढ़ गये हैं! लेकिन विवाह से बचना किसके लिए संभव है? मैं गृहस्थी चलाना नहीं जानता, इसीलिए मुनि बन कर भटक रहा हूँ! हे ज्ञानेश्वर, श्रेष्ठ पुरुषों ने बताया है कि विवाह और कर्त्तव्य करना पुरुषों का लक्षण है। इसी सत्य को मानकर पुरुषोत्तम तथा आदि देवता कहलाने वाले सभी लोग विवाह करके सृष्टि, स्थिति, लय आदि कर्त्तव्य निभा रहे हैं! अब आपकी और मेरी बात क्या कहे?"

इसके उत्तर में विघ्नेश्वर ने हंसकर कहा–"ओहो, आप भी विवाह के पीछे पागल मालूम होते हैं! स्वयंवरों में भी शायद भाग लेते होंगे।"

"मैं अपने को त्रिकालवेदी मानता हूँ, तो आप अनंतकालवेदी हैं। वाचालता में आपके बाद ही मेरा नंबर आता है। सबकी जन्म कुंडलियां आपके हाथों में सुरक्षित हैं। आपको अगर भुला दे तो

कोई श्रेष्ठ ज्योतिष भी सफल न होगा! हम दोनों वाचाल हैं! तर्क करने लग जाते हैं, यह सारा अनंतकाल भी हमारे लिये पर्याप्त न होगा! पर आप तो पूर्ण ज्ञानी हैं। मुझ जैसे अध कचरे ज्ञानी चाहे जिस किसी प्रकार के पागलपन में भले ही फंसे, मगर आप जैसे लोग कमल पर ओस कण की भांति किसी के अधीन नहीं होते! आप तो माया से अतीत हैं! इसीलए सिद्धि, बुद्धि तथा अष्ट सिद्धियां आपको वर लेती हैं! अतः मेरे भी मुँह से श्रीरस्तु, शुभमस्तु, शीघ्र कल्याण सिद्धिरस्तु– ये शब्द निकलने दीजिए।" यों कहकर नारद ने महती वीणा पर कल्याणी राग का आलाप शुरू किया, फिर मंगल गीत का गान किया। इसके बाद सभी देवता अपने अपने निवासों को लौट गये। तब शिवजी विघ्नेश्वर तथा पार्वती को साथ लेकर अपने निवास कैलास को चले गये। नारद सीधे वज्रदंत के यहां चले गये।

थोड़े दिन पहले वज्रदंत की पूंछ पकड़ कर पुत्र गणपति ने फेंक दिया था, नीचे गिरने की वजह से उसके बदन में जो चोट लगी, उसका दर्द अभी बना रहा। धवला अपने पति वज्रदंत की सेवा में लगी थी। वह नारद को देख यह सोचते घर के अंदर चली गई कि न मालूम क्यों ये महाशय फिर से कौन झंझट पैदा करेंगे।

नारद मूषिकासुर वज्रदंत से बोले– "तुम्हारा अपमान करने वाले गणपति इस समय विघ्नेश्वर के रूप में शोभायमान हैं"

अपमान की आग में सुलगने वाला वज्रदंत भौंचक्का हो गया और बोला– "हे नारद! अब मुझे क्या करना होगा?"

"वर प्रदान करने वाले देवता ब्रह्मा तो हैं ही! वज्र को वज्र के साथ ही तोड़ना होगा! प्रतीकार लो! गणपति ने इस समय विघ्नेश्वर का नाम धारण किया है!" यों कहकर नारद चुपके से खिसक गये।

इस महाश्वेता नामधारिणी धवला ने वज्रदंत को अनेक प्रकार से समझाया, फिर

भी उसकी बातों पर ध्यान न दिये बिना वज्रदंत बोला–"महाश्वेता! तुम्हारे सौभाग्य से मुझे मौत का कोई डर नहीं है। अपने अपमान का प्रतीकार करके मुझे शांति प्राप्त करने दो।" यों कहकर वज्रदंत ने भयंकर तपस्या की और ब्रह्मा को प्रसन्न किया। ब्रह्मा ने पूछा–"तुम और क्या चाहते हो?"

"विघ्न को कोई रूप प्रदान कर उसे मेरे आज्ञानुवर्ती बना दीजिए।" मूषिकासुर ने कहा।

ब्रह्मा ने विघ्न का आवाहन करके वज्रदंत के सामने खड़ा किया। पर उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। इस पर ब्रह्मा ने उसे सूक्ष्म दर्शन की दृष्टि प्रदान की। साधारण आँखों को न दिखाई देने वाला विघ्न काले सूक्ष्म क्रिमि के रूप में उसे दिखाई दिया।

मूषिकासुर ने आश्चर्य में आकर पूछा–"भगवन, यह क्या? इस किरकिरे को मैं क्या कर सकता हूँ?"

ब्रह्मा मंदहास करके बोले–"विघ्नबीज आँखों को न दीखनेवाला सूक्ष्म अणु है। जैसे सूक्ष्म क्रिमि के द्वारा भयंकर रोग फैल जाता है, इसी प्रकार अनर्थ दायक विघ्न का कारण भले ही छोटा क्यों न हो वह भीषण आकृति धारण कर सर्वनाश कर सकता है। कामरूपी है, किसी भी प्रकार का रूप धरकर अनर्थ पैदा करना उसका काम है। तुम अब जो कुछ करना चाहते हो, कर लो।"

मूषिकासुर ने विघ्न को आदेश दिया–"तुम महान गजासुर रूप में जाकर विघ्नेश्वर का नाश करो।"

इस पर विघ्न भयंकर गाजासुर का रूप धरकर महान पर्वत की भांति तलवार चमकाते आसमान में उड़ा।

उधर कैलास में विघ्नेश्वर लाड़-प्यार में पले, अपने माता-पिता की अनुमति लेकर विश्वकर्म द्वारा निर्मित उस महल की ओर चल पड़े। सामने से गुजरते हुए कामदेव

आकृति धरकर दिखाई दिया । विघ्नेश्वर ने आश्चर्य में आकर पूछा–"तुम तो निराकर हो, इस आकार में दिखाई क्यों दे रहे हो? बात क्या है? मैं तो भोला व्यक्ति हूँ । मुझ पर तुम अपनी धनुर्विद्या का कौशल मत दिखाओ ।"

कामदेव ने विनयपूर्वक सर झुकाकर कहा–"हे गजानन, आप तो मेरे बाणों के अतीत हैं । मुझे तो परम शिव ने ही यह वरदान दिया है कि अगर मैं किसी को दिखाई देना चाहूँ तो दीख सकता हूँ । हम दोनों की आकृतियों में कई अंशों में समानता है । हम निकट के भी हैं, इसी लिए मैं आपको दिखाई दिया । बस, यही बात है । अगर आप वृषभ वाहनधारी शिवजी के पुत्र हैं तो मैं गरुड़ वाहनधारी विष्णु का पुत्र हूँ । मुझे शिवजी ने भस्म करके जिलाया है! आपका सर काटकर आपको जीवित किया है! मेरा वाहन तोता है तो आपका वाहन चूहा है । मन को विचलित कराने वाले पुष्प बाण मेरे आयुध हैं, तो मन को नियंत्रण में रखने वाले पाश और अंकुश आपके हथियार हैं । आपके छोटे भाई कुमारस्वामी का अवतरण होना है न? पार्वती और परमेश्वर के परस्पर अनुराग का तेज ही कुमार स्वामी के रूप में अवतरित होगा । तारकासुर का संहार होना है! इसी वास्ते तो देजताओं ने मुझे भस्म करवाया है । मैं कैलास में जा रहा हूँ । मुझे आज्ञा दीजिए ।"

विघ्नेश्वर ने उत्तर दिया–"कामदेव, मैं इसीलिए कैलास से उतर कर चला जा रहा हूँ । तुम अपना कार्य निर्विघ्न संपन्न करो! तुम्हारा काम सफल होगा!"

इसके बाद कामदेव अदृश्य हो पार्वती तथा शिवजी के निवास कैलास मण्डप में पहुँचा ।

विघ्नेश्वर उस महल के पास पहुँचकर सिंहद्वार के समीप की एक संगमरमर की शिला पर सुखपूर्वक बैठे चतुर्दिक की प्रकृति का आनंद के साथ अवलोकन करने लगे ।
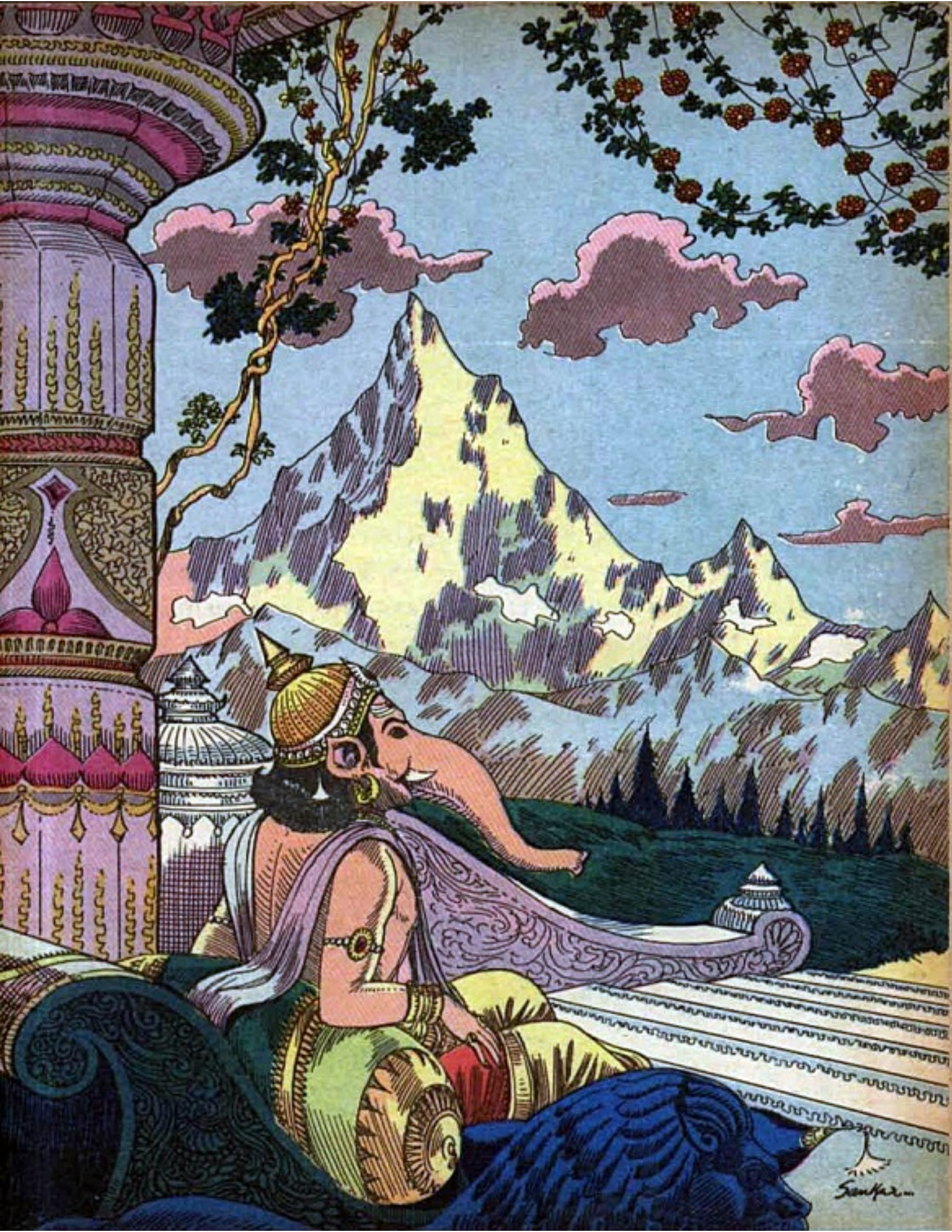
हिमालय के जल प्रपात मंद गंभीर ध्वनियों के साथ स रि ग म का नाद कर रहे थे। उस प्रशांत समय में एक भयंकर ध्वनि सुनाई दी–"विघ्नेश्वर नामक व्यक्ति कहाँ पर है?"

इसके थोड़े क्षण बाद महान गजासुर रूपधारी विघ्न विघ्नेश्वर के सामने आ उतरा। उस वक़्त पृथ्वी कांप उठी। गजासुर गरज उठा–"मैं महा गजासुर हूँ! तुम यदि गजमुखधारी हो तो मैं गजकाय हूँ! मैं इस वक़्त तुम्हारा संहार करने आया हूँ!"

विघ्नेश्वर बहरे की भांति भोली नज़र दौड़ाकर बोले–"अबे, गन्ने के टुकड़े-टुकड़े करके खाने की मेरी इच्छा हो रही है। तुम कुल्हाड़ी को पैनी बनाकर दोगे तो मैं तुम्हें मोदक खिलाऊँगा।" यों कहकर विघ्नेश्वर ने उस पर अपना परसु फेंका। इस पर गजासुर के पैर कट गये और एक पर्वत की भांति टूटकर नीचे गिर पड़ा। उस पर सवार हो विघ्नेश्वर उसका मर्दन करते हुए तांडव नृत्य करने लगे। तब विघ्न चिल्ला उठा–"महानुभाव! मैं तो विघ्न हूँ! ब्रह्मा के वरदान के प्रभाव से मैं इस प्रकार गजासुर के रूप में आया हूँ। मुझे अच्छा सबक़ मिल गया है।"

इसके उत्तर में विघ्नेश्वर बोले–"मैं विघ्नों का विनाश करने वाला हूँ! अलावा इसके तुम इस वक़्त गजासुर हो! तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े करना अनिवार्य है! ये टुकड़े तुम्हें और मुझे भी भुलावे में डालनेवालों को ही सतायेंगे। तुम कालीय नाग बन कालिंदी सरोवर में छिपे रहो। बालकृष्ण तुम्हारा मर्दन करेगा! उनके चरण-स्पर्श से तुम्हारे पापों का परिहार होगा। उत्तम नस्ल के सर्पों के फणों पर उस समय से विष्णु के चरण-चिह्न अंकित हो शोभा देंगे!" यों कहकर विघ्नेश्वर ने परसु से विघ्न के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। उसके कण सर्वत्र व्याप्त हो अदृश्य हो गये। तब विघ्न केवल अणु रूप में शेष रह गया। देवताओं ने प्रसन्न हो विघ्नेश्वर पर फूलों की वर्षा की।

[५]

जीनाब ने मुस्कुरा कर कहा–"इसमें कोई कमी न होगी। समझ लीजिए, मेरे दोस्त छेद वाले घड़ों के बराबर हैं।"

इसके बाद जीनाब ने अपने घर से कालीन, तकिये, गद्दे, मेज़ व थाल आदि मंगवाकर एक बड़े कमरे में सजवाया। खाने-पीने की सामग्री का इंतजाम करके सराय के द्वार पर खड़ी हो गई।

थोड़ी ही देर में कुबड़ा अली और उसके साथ नौ अनुचर ठाठ से वहां पर आ पहुँचे। जीनाब ने उसे देखते ही पूछा–"क्या, आप ही अहमद साहब हैं?"

"नहीं, मुझे तो कुबड़ा अली बताते हैं।" अली ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया।

"तब तो आप सब पधार करके मेरी मेहमानदारी को स्वीकार कीजिएगा।" यों कहकर उन्हें जीनाब एक विशाल कक्ष में ले गई। वे सब शराब वाले पीपे को घेरकर पीने लगे। शराब में जीनाब ने भांग छानकर मिला दिया था, इस वजह से जल्द ही वे लोग नशे में चूर हो गये। जीनाब सबको पिछवाड़े में खींच ले गई। उन पर एक वस्त्र ढककर लौट आई, सारा कमरा साफ़ करके फिर सराय के फाटक पर जा खड़ी हुई।

थोड़ी देर में अहमद के दस सिपाही आ पहुँचे। जीनाब ने उनका भी इसी तरह स्वागत किया, शराब पिलाकर नशे में आने पर पिछवाड़े में डाल दिया और उन पर भी एक वस्त्र ढक दिया। जल्द ही चालीस सिपाहियों की यही गति हुई। सबसे आखिर अहमद खुद आ पहुँचा। फाटक पर जीनाब को देख पूछा–"अरी छोकरी! क्या तुम्हें मेरे सिपाही दिखाई दिये?"

अरब की कहानी

"ओह, आप कोत्वाल अहमद तो नहीं हैं? तब तो सुनिये। आपके सिपाहियों को इस गली के छोर पर कोई बूढ़ी दिखाई दी। आप से मेरी बिनती है कि उनके लौटने के पहले आप मेरे कमरे में पधार कर मेरी खातिरदारी स्वीकार कीजिए।" जीनाब ने कहा।

अहमद बड़ा खुश हुआ। शराब पीकर भांग के असर से जल्द ही होश-हवास खो बैठा। जीनाब ने उसके सारे क़ीमती वस्त्र और आभूषण हड़प लिये। बाकी चालीसों सिपाहियों को इसी तरह लूट लिया। उनकी सारी पोशाकों को अहमद के घोड़े पर लादकर सीधे अपने घर चली गई। अहमद और उसके चालीस सिपाही दो दिन सोते रहें और तीसरे दिन सवेरे जाग उठे। पहले उनकी समझ में न आया कि वे कहाँ पर हैं? पर धीरे-धीरे उनकी याद ताजा हो उठी, उन्हें इस घोर अपमान पर लज्जा भी हुई। सिर्फ़ उसके बदन पर बनियन और लंगोटी मात्र थी। लेकिन अहमद के पीछे चालीस सिपाही हिम्मत करके सराय से बाहर निकल आये।

अहमद सराय से निकल कर थोड़ी ही दूर गया था, हसन उसके सामने से आ गुजरा। उसने पूछा–"अहमद, इस ठण्डी हवा में यों कपड़ों के बिना टहलना तबीयत के लिए अच्छी नहीं है न?"

"हसन, यह तो क़िस्मत का खेल है! मुझे एक हसीन लड़की ने दगा दिया है।

क्या तुम उसका पता जानते हो?" अहमद ने दीनतापूर्वक पूछा ।

"मैं उस लड़की को ही, बल्कि उसकी माँ को भी जानता हूँ! क्या मैं अभी जाकर उन्हें बन्दी बनाऊँ?" हसन ने पूछा।

"यह कैसे मुमकिन है?" अहमद ने आश्चर्य में आकर पूछा ।

"इसमें कौन बड़ी बात है? तुम खलीफ़ा के पास जाकर अर्ज़ करो कि तुम उन दोनों दगाबाजिनों को क़ैद नहीं कर सकते हो! और उनसे बिनती करो कि उन्हें पकड़ने का काम वे मुझे सौंप दे!" हसन ने सलाह दी ।

इस पर अहमद ने ऐसा ही किया । खलीफ़ा ने हसन को बुलाकर पूछा–"क्या तुम उस दुष्ट बूढ़ी को जानते हो? यह काम अगर मैं तुम्हें सौंप दूं तो उसे क़ैद कर सकते हो?"

"हुज़ूर! मैं उस बूढ़ी को जानता हूँ! मैं नहीं समझता कि उसने धन की लालच में पड़कर ये सारे काम किये हैं । अपनी होशियारी और चालाकी का हुज़ूर को परिचय कराने के लिए यों किया होगा! इस शर्त पर आप उसे अभय दान दें कि उसने जो कुछ चुराया है, सब लाकर आप को सौंप दे तो आप उसे सजा न देंगे, तब मैं उसे क़ैद करके आपके सामने हाज़िर कर सकता हूँ ।" हसन ने शर्त रखी ।

खलीफ़ा ने अभय दान दे दिया । इसके बाद हसन सीधे दिलैला के घर पहुँचा ।

जीनाब ने आकर दर्वाजा खोला। इस पर हसन ने बताया–"तुम अपनी माँ को बुला लाओ। उसको खलीफा बुला रहे हैं! उनका अभय दान ले आया हूँ। तुम्हारी माँ ने जो कुछ सामान हड़प लिया वह सारा सामान तुम घोड़ों पर लदवा दो।"

जीनाब की पुकार सुनकर दिलेला महल पर से उतर आई। उसके द्वारा चुराया गया सारा सामान घोड़ों पर लदवा दिया गया। दिलैला अपनी सबसे अच्छी पोशाकें धारण कर खलीफ़ा के दर्शन करने के लिए तैयार हो गई। इस पर हसन ने दिलैला से पूछा–"तुम्हारे पास जो कुछ सामान है, सब घोड़ों पर लदवा दिया है न?"

"हसन, मैं सच कहती हूँ! अहमद और उसके सिपाहियों ने जो पोशाकें पहन ली थीं, उन्हें छोड़कर मैंने सारा सामान दे दिया है! क्योंकि उस चोरी के साथ मेरा कोई वास्ता नहीं है।" दिलैला ने कहा।

हसन ने मुस्कुरा कर कहा–"हाँ, हाँ, मैं जानता हूँ। यह काम किसी दूसरे का है!" इसके बाद दोनों हंसते हुए घर से निकल कर दरबार में आ पहुँचे।

बूढ़ी को देखते ही खलीफ़ा ने गुस्से में आकर सिपाहियों को हुक्म दिया कि उस बूढ़ी का सर काट डाले। लेकिन हसन ने विनयपूर्वक खलीफ़ा को उनके अभयदान की याद दिलाई। तब खलीफ़ा ने दिलैला से पूछा–"तुम्हारा क्या नाम है?"

"कबूतरों की डाक चलाने वाले अधिकारी की मैं औरत हूँ, मेरा नाम दिलैला है।" दिलैला ने निडर होकर कहा।

"तुम तो बड़ी क़ाबिल मालूम होती हो! लेकिन तुमने इन सबको क्यों दगा दिया है?" खलीफ़ा ने फिर पूछा।

दिलैला खलीफा के सामने साष्टांग दण्डवत करके बोली–"हुज़ूर, आप मुझे माफ़ करें। मैंने सोचा कि चोरी करने में क़ाबिल अहमद और हसन को आपने बड़े-बड़े ओहदे दे दिये, ऐसी हालत में अगर मैं भी उनसे बढ़कर ज्यादा होशियारी का

परिचय दूं तो मुझे मेरे खाविंद की नौकरी सौंप देंगे! इसी ख्याल से मैंने यों सबको धोखा दगा-दिया है।"

खलीफ़ा को दिलैला की बातों में सचाई नजर आई। उन्होंने फ़रियादियों को उनका सारा सामान दिलवाया, तब दिलैला से पूछा—"बताओ, इस वक़्त तुम क्या चाहती हो?"

"हुजूर! आप मुझे मेरे खाविंद की नौकरी और वही तनख्वाह दिलवा दीदिए! मैं उस काम को अच्छी तरह से करना जानती हूँ। मैं और मेरी बेटी—हम दोनों मिलकर कबूतर पालती थीं। उनके पैरों में चिट्ठियाँ बांधती थीं। कबूतरों की डाक चलाने के लिए हुजूर ने बड़ी कचहरी बनवाई। उसका पहरा देने के लिए चालीस नीग्रो गुलाम और चालीस शिकारी कुत्तों का इंतजाम किया। उस कचहरी को मैंने ही चलाया था।" यों दिलैला ने विनती की।

खलीफा ने उसी वक़्त आज्ञा पत्र लिखवाया और दिलैला को कबूतरों की डाक चलाने के लिए संचालिका के पद पर नियुक्त किया। तब चालीस नीग्रो गुलामों तथा चालीस शिकारी कुत्तों को उसके अधीन कर दिया।

इसके बाद दिलैला ने अपने घर का सारा सासान कबूतरों की डाकवाली कचहरी में पहुँचवा दिया। उसी दिन उसने पुरुष की पोशाकें धारण कीं और अपने सर पर चांदी के कबूतर की आकृति अंकित सोने की टोपी धारण की, तब डाक में भेजे जानेवाले संदेश लाने राज महल को चली गई। चालीस नीग्रो गुलामों के वास्ते उसने लाल जरीदारी पोशाकें बनवाईं। अपने नये महल की शोभा बढ़ाने के लिए इकतालीस खूंटे लगवाये और उन पर अहमद की पोशाकें, कुबड़े अली की पोशाकें तथा बाक़ी उन चालीस सिपाहियों की पोशाकें लटकवा दीं। इस तरह दिलैला अपनी चुनौती को सफल बनाकर अपनी बेटी जीनाब के साथ आराम से जीने लगी। (और है)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अगस्त १९८१ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

A. L. Syed

★

K. Vasanthavalli

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जून १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अप्रैल के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **खेल खेल तक सीमित रखना!**

द्वितीय फोटो : **देखो, संकट में न पड़ना!!**

प्रेषक : **राजेन्द्र चोपड़ा,** ८३-ए, गुरूनानक नगरी, पटेल चौक, जालन्धर (पंजाब)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
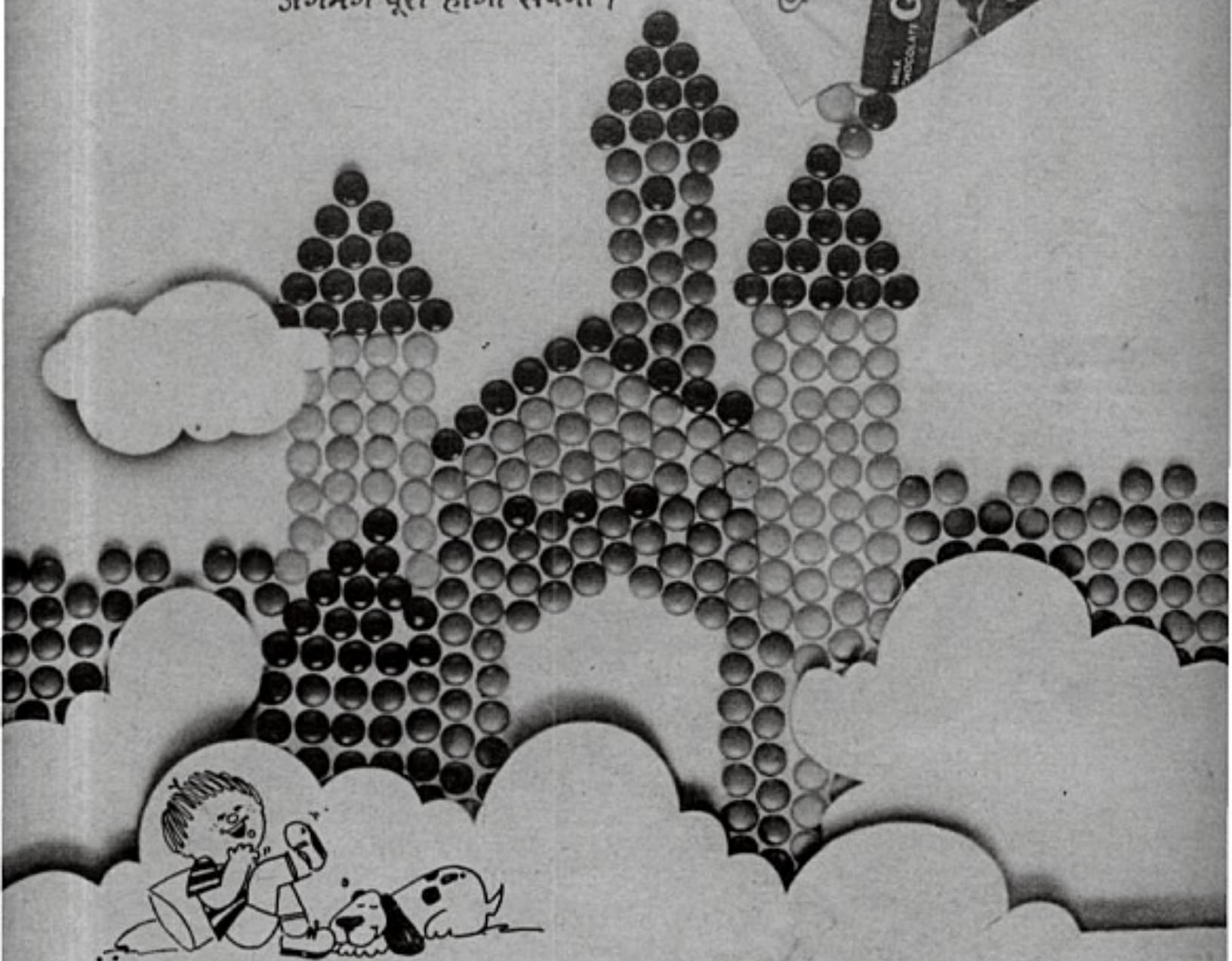
कितना सुन्दर सपना...झट ले लो जॅम अपना!

कॅडबरिज़
चॉकलेट्स

कॅडबरिज़ जॅम हैं ही ऐसे; मीठे मीठे सपनों जैसे!

OBM/6065 HN

Campa
Campa
Campa
Campa
कैम्पा के संग संग
लेते मज़ा हम!
कैम्पा आरेंज फ्लेवर - मौजमस्ती का स्वाद!
OBM/5361

CHANDAMAMA (Hindi) JUNE 1981 Regd. No. M. 5452
everest/80/PP/333 hn